बीसवीं सदी का महान संत

विनोबा



नरेन्द्र शर्मा

बीसवीं सदी का महान सन्त

विनोबा

एस. के. पब्लिशर्स नई दिल्ली-24



बीसवीं सदी का महान संत

विनोबा

नरेन्द्र शर्मा

प्रकाशक
एस. के. पब्लिशर्ज
ए-47, अमर कालोनी
नई दिल्ली-110024
आवरण और रेखाचित्र : जे. एन. जोशी
प्रथम संस्करण, 1987 : मूल्य : 25 रु०
नागरी प्रिंटर्स द्वारा
ग्रंथशिल्पी, शाहदरा, दिल्ली-110032
में मुद्रित

जन्म

बीसवीं सदी के इस महान संत का जन्म, 11 सितम्बर, 1895 ई० को महाराष्ट्र के कुलाबा जिले में बसे छोटे से गाँव "गगोदा" में हुआ। भले ही उस समय यह गाँव बहुत छोटा था और बाहर के रहने वाले लोगों ने उसका नाम तक नहीं सुना था। आज यह संयोग की बात समझो अथवा इस महान तपस्वी संत की देन कि इस गाँव का नाम केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में प्रसिद्ध हो गया है। उसका कारण केवल हमारे राष्ट्र संत आचार्य विनोवा जी ही है।

"विनायक।"

जी हाँ यही नाम था, इस बालक का जो घर में सबसे बड़ा था, मध्यम वर्ग के उच्च कोटि के ब्राह्मण श्री नरहरि शंभुराव, उस समय बड़ौदा राज्य में नौकरी करते थे, दादा श्री शंभुनाथ जी, बहुत ही धार्मिक विचारों के ब्राह्मण थे, पूजा-पाठ, और धर्म ज्ञान, के साथ-साथ वे प्रगतिवादी विचारधारा भी रखते थे। रुक्मिणी देवी का तो कहना ही क्या था, वे तो सदा ही अपने भजन कीर्तन में खोयी रहतीं, घर के काम काज के साथ-साथ वे हर समय प्रभु के भजन गाती रहतीं।

विनायक अपने माँ-बाप की प्रथम संतान होने के कारण माँ बाप के प्यार के सागर में डुबकियाँ लगाते; एक तो ब्राह्मण दूसरे घर में पूजा-पाठ भजन कीर्तन का वातावरण बालक विनायक को निरंतर धार्मिक विचारों की ओर खींचता चला जा रहा था।

विनायक के छोटे चार भाई और एक बहन भी थी। यह सबके सब दादा शंभुराव के पास ही गाँव में रहते थे, यही कारण था कि उनके दादा का प्रभाव उनके जीवन पर बहुत पड़ा है। वैसे भी बचपन में बच्चों को जिस वातावरण में रहने का अवसर मिले उसी का प्रभाव उन पर अधिक पड़ता है।

शंभुराव जी घर से दूर कुछ महीनों के लिए "बाई" भी जाकर रहते वहाँ पर वे एक मंदिर के प्रबंधक थे,वैसे तो मंदिरों में रहनेवाले पुजारियों के ऊपर स्वयं बहुत बड़ी जिम्मेवारी आ जाती है, उस समय की आप कल्पना करें, और आज से करीब नब्बे वर्ष पीछे जाकर उस अतीत में झांक कर देखें जब हमारे देश में शिक्षा जनता तक नहीं पहुँच पाई थी। आ जाकर, यही गाँव के ब्राह्मण होते थे जो लोगों को शिक्षा देते थे। धर्म, ज्ञान की शिक्षा—और उस समय के भारत में एक बहुत बुरी परम्परा चल रही थी, जात-पात। छोटी जाति के लोगों से बड़ी जाति के लोग घृणा करते थे। ब्राह्मण लोग, हरिजनों को मंदिरों में, प्रवेश की अनुमति नहीं देते थे। किन्तु—बालक विनायक के दादा शंभुराव उस समय भी विशेष त्यौहारों पर अपने मंदिर के द्वार हरिजनों के लिए खोल देते और लोगों को कहते थे कि—

"भगवान के घर में कोई छोटा बड़ा नहीं, हर इंसान जो भगवान पर विश्वास रखता है, उसे पूजा करने का अधिकार है।"

केवल यही नहीं—शंभुराव तो त्यौहारों के अवसर पर अपने मुसलमान गायक भाइयों को मंदिर में बुलाकर उनके मुँह से भी भजन सुनते। शिव मंदिर का प्रबंध कई पीढ़ियों से भावे परिवार के हाथों में चला आ रहा था, किन्तु यह परिवर्तन केवल शंभुराव जी के समय ही आया था। इससे पूर्व कभी भी इस मंदिर के द्वार हरिजनों के लिए नहीं खुले थे। इस प्रकार से घृणा की जो दीवार जो युगों से बढ़ती चली आ रही थी उसे विनोबा परिवार के

शंभुराव ने गिरा दिया था । हालांकि यह सत्य है कि इस काम के लिए कुछ ब्राह्मणों ने खुलकर उनकी आलोचना भी की। किन्तु शंभुराव भी अपनी धुन के पक्के थे । उन्होंने यह निर्णय ही कर लिया था कि वे एक दिन मानवता के बीच में खड़ी की गई इन नफरत की दीवारों को गिरा कर ही छोडेंगे। भगवान किसी विशेष धर्म के लिए नहीं बल्कि पूरी मानवता के कल्याण के लिए ही शिक्षा देते हैं।

यही प्रभाव पड़ा था बालक विनायक पर वह बचपन से ही अपने दादा के साथ रह कर सब कुछ सीखते रहे थे।

यही नहीं शंभुराव जी बहुत बड़े दिल के मालिक और दयालु भी थे । उनके इस स्वभाव को हम इस घटना से देख सकते हैं ।

विनोबा परिवार के पास जितनी जमीन थी उसमें आमों के बड़े-बड़े बाग थे। गर्मी के दिनों में जैसे ही यह आम पकते तो पहले आम जो पेड़ों से उतरते उन्हें बच्चों के हाथ पडौसियों और अपने मित्रों में बांटा जाता। उसके पश्चात् ही घर में खाना शुरू करते थे। यही प्रमाण था उनके विशाल हृदय और दयालुता का, इससे हम भली-भाँति यह अंदाजा लगा सकते हैं कि विनोबा परिवार के विचार कैसे थे। इन्हीं सब बातों का प्रभाव पड़ा था विनायक पर।

अपने दादा के साथ-साथ विनोबा जी के जीवन पर उनकी माता का बहुत प्रभाव पड़ा है। उनकी मां बहुत ही धर्म विचारों की स्त्री थीं—इनकी सबसे बड़ी देन आचार्य जी को दिया हुआ यह गुरु मंत्र है।

"जो देता है, वह देव है, और
जिसके हाथ से कुछ छुटता ही नहीं वह राक्षस है।"

यह मंत्र विनोबा जी ने अपनी माँ के चरणों में बैठकर सीखा था। उस समय गाँव के लोग विशेष रूप से ब्राह्मण वर्ग जो

अपने आपको सबसे अधिक शिक्षित समझता था। यही वर्ग अछूतों से सबसे अधिक नफरत करता था। इसका प्रभाव स्त्री जाति पर सब से अधिक था, मगर विनोबा की माता जी तो उस समय भी हरिजनों से सबसे अधिक प्यार करती थीं; वे उनके दुःखों का बहुत ख्याल करती थीं।

विनोबा जी के पिता चूँकि उन दिनों सरकारी नौकरी में थे सरकार का मतलब उस समय की अंग्रेज सरकार से है। वे अधिक-तर खाकी वर्दी में रहते थे। इसी वर्दी को अंग्रेजी सरकार ने अपनी सेना के लिए पसन्द करके सैनिक वर्दी बना दिया था। नरहरि जी का जीवन भी बहुत ही परिश्रमी और ईमानदारी से भरा था। वे अपने काम में इतने मग्न रहते कि दफ्तर में कभी घड़ी की ओर नहीं देखा, वे घड़ी के अनुसार काम नहीं करते थे बल्कि अपने काम के हिसाब से ही आते जाते थे। कई बार तो कितनी रात रात तक वे अपने काम में लगे रहते।

नरहरि जी को कपड़ों की छपाई का बहुत शौक था। बचपन से ही उनकी रुचि इस कार्य की ओर अधिक लगी रहती थी। उनकी एक मात्र इच्छा थी कि उनके पुत्र विनायक उच्च शिक्षा प्राप्त करके विदेश जाएँ और वहाँ से बैरिस्टर बनकर भारत आएँ।

हर मनुष्य अपने से अधिक अपनी संतान के बारे में अधिक चिंतित रहता है उसे क्या पता होता है कि उसका अपना भविष्य क्या है? सन 1947 ई० में जब नरहरि राव बहुत बीमार पड़ गए तो विनोबा जी के छोटे भाई शिवाजी उन्हें अपने घर बुला लाए तीन सप्ताह के पश्चात् ही पूर्णिमा के दिन उनका देहांत हो गया।

विनोबा जी अपने परिवार के बच्चों में सबसे बड़े होने के कारण सबसे अधिक जिम्मेवारी महसूस करते थे। सबसे छोटे भाई

का नाम दत्तात्रिय था। वे बचपन में ही शांत हो गए। बहन एक ही थी जिसका नाम शांति बाई था। किन्तु यह भी कितने दुःख की बात थी कि शादी के थोड़ी देर पश्चात् ही, छोटी आयु में शांति बाई की मृत्यु हो गई। शेष दो भाई बालकोवाजी और शिवाजी ने भी विनोबा जी की भांति ब्रह्मचारी रहने का दृढ़ निश्चय कर लिया था।

विनोबा जी, के पूरे जीवन पर ही अपनी माँ के आदर्श चरित्र की छाप नजर आती है। उन्होंने अपनी माँ से बहुत कुछ सीखा। वे स्वयं अपने साथियों से कहा करते थे।

"माँ ने मुझे बहुत शक्ति दी है।"

"उसे मेरी शक्ति में असीम विश्वास था।"

"उसकी इस श्रद्धा से मुझे बहुत बल मिला है।"

माँ की बात जब भी विनोबा जी करते तो उनकी याद में उनका गला भर आता था। आँखों में आँसू निकल आते, इससे आप भली-भाँति अंदाजा लगा सकते हैं कि कितना प्यार करते थे विनोबा जी अपनी माँ से।

घटनाएँ

विनोबा जी ने जीवन भर शादी न करने का जो निश्चय किया, यह भी कोई साधारण बात नहीं थी। यह तो एक ऐसी घटना थी जिसने उनके पूरे जीवन मार्ग को ही बदल दिया था, इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि यह फैसला उन्होंने अपनी माँ की ही शिक्षा प्राप्त करके किया, उनकी माँ के ही यह शब्द थे—

"जो शादी करके सदाचार पूर्वक रहता है, वह अपने कुल को

वढ़ाता है, परन्तु जो ब्रह्मचारी होता है, वह केवल एक नहीं बल्कि बयालीस पीढ़ियों को पवित्र कर देता है।"

माँ की इस प्रेरणा का बहुत ही गहरा असर हुआ था विनायक पर। उस बालक ने दस वर्ष की आयु में ही यह दृढ़ संकल्प कर लिया था कि मैं जीवन भर शादी नहीं करूँगा।

केवल यही नहीं विनोबा जी ने अपनी छोटी आयु में ही उन सब चीजों का त्याग किया जिनसे ब्रह्मचर्य के रास्ते में बाधा पड़ती थी, इस प्रकार से उनका जीवन बहुत ही सादा हो गया था—शायद उन्हें देखकर ही उनके दोनों छोटे भाइयों को यह प्रेरणा मिली कि वे भी शादी नहीं करेंगे।

माँ ने जीवन के हर क्षण में अपने बेटों को आदर्शवादी बनाने के प्रयत्न किए, ऐसी ही एक घटना अपने पाठकों को सुनाता हूँ।

एक बार विनोबा जी ने खाना खाते-खाते अपनी माँ से पूछा कि, "क्या आज भी पुराने ज़माने जैसे सच्चे साधु सन्त इस संसार में हैं? माँ ने हँसकर उत्तर दिया, बेटे विनय, इस संसार में आज भी सब कुछ है केवल हम उन्हें जानते नहीं, उन तक पहुंच नहीं पाते। उन्हें पहचान नहीं सकते।"

माँ की बात सुन बेटा चुप तो कर गया, मगर माँ बेचारी यह कहाँ सोच सकती थी कि उसका यह बेटा स्वयं ही एक दिन इस युग का महान सन्त बन जाएगा, जिसे सारा संसार सदा याद रखेगा।

माँ रुक्मिणी देवी, शंकर जी की पूजा करती थीं, एक बार उन्होंने शंकर जी पर एक लाख चावल चढ़ाने का व्रत लिया, उनके पति नरहरि ने अपनी पत्नी का मजाक उड़ाते हुए कहा—

"देखो भाग्यवान, इस तरह से चावल गिनने का क्या लाभ, तुम एक बार चावल गिनकर उन्हें तोल लो, बस जब भी तुम ऐसा व्रत करो जो कि तुम सदा करती ही रहती हो, बस उसी समय

चावल तोले और शंकर जी पर चढ़ा दिए।

पति की यह बात सुन, रुक्मिणी देवी चक्कर में पड़ गईं उन्होंने अपने बेटे विनोबा से पूछा।

"क्यों विन्या, क्या ऐसा करना उचित होगा ?"

नहीं माँ, ऐसा करना उचित नहीं है, एक ही बार तोले हुए चावल चढ़ा देने से पूजा नहीं होती, एक-एक दाना गिनकर चढ़ाने से हर बार मुँह से भगवान का नाम निकलता है, इसका सीधा अर्थ है उतनी ही बार भगवान को याद करना।

बेटे की बात सुन माँ को बहुत ही खुशी हुई।

इस प्रकार की एक और घटना है।

एक बार उनके घर में तार आया कि उनके अंधे चाचा की मृत्यु हो गई है। तार पढ़ने के पश्चात् सब घरवालों को कुछ शांत सा देख विनायक ने पूछा कि यह क्या आप चाचा की मृत्यु पर घर में पूरे रूप से शोक क्यों नहीं मना रहे ?

"तब उनकी माँ ने बताया कि बेटा, वे वास्तव में तुम्हारे चाचा नहीं थे, हमने तो केवल उन्हें अंधे और बेसहारा समझ कर ही अपने घर में स्थान दे रखा था।"

इस प्रकार से माँ रुक्मिणी ने न जाने कितने बेसहारा लोगों को सहारा दे रखा था। जिसका इस दुनिया में कोई न था उसका सहारा विनोबा की माँ बन जाती थीं।

घर पर युवक विनायक अपनी माँ को मराठी दैनिक समाचार पत्रों से देश विदेश के समाचार सुनाया करते थे, किन्तु माँ को इन समाचारों से अधिक प्रेम धार्मिक पुस्तकों से था। उन्होंने एक बार अपने बेटे से कहा कि तुम मुझे पवित्र गीता पढ़कर सुनाया करो।

विनायक बाजार से मराठी में गीता लेने के लिए गए। वे वासन पंडित द्वारा अनुवादित गीता लेकर आए, किन्तु इस गीता का

अनुवाद कुछ इस ढंग से किया गया था कि इसे आम आदमी समझ ही नहीं सकता था, उसकी भाषा बहुत कठिन थी।

माँ ने इस गीता को सुनकर बड़े दुःख से कहा, बेटा विनिया, ऐसी पुस्तकों का क्या लाभ जिन्हें आम जनता समझ न सकती हो, यह धार्मिक पुस्तक है इसका अनुवाद तो इतना सरल होना चाहिए कि हर प्राणी इसे समझ सके।

"हाँ माँ, बात तो आपकी ठीक है, किन्तु अब हम इसमें क्या कर सकते हैं, यह सब काम तो विद्वानों के हैं।"

"बेटा विनिया, यह तू क्यों भूलता है कि विद्वान भी तो किसी न किसी मां के पेट से जन्म लेते हैं, और मैं तो तुम्हें यही सलाह दूँगी कि इस गीता को तू ही जनता की भाषा में अनुवाद कर, इससे करोड़ों लोगों को ज्ञान मिलेगा।

उस समय माँ के मुँह से यह बात सुनकर विनोबा जी बहुत हैरान हुए किन्तु—

"मां की इस इच्छा को पूरी करने की धुन उन पर सवार हो गई थी। माँ ने ठीक ही तो कहा है कि, उसे जनता के लिए यह काम करना चाहिए, फिर समय की गति के साथ ही लोगों के सामने एक नया चमत्कार हुआ, विनोबा जी अपनी मां के जीवित रहते तो उनकी इच्छा पूरी न कर सके परन्तु—

गतई की रचना का रहस्य

सन 1930-31 में ही विनोवा जी ने अपनी माँ की इस इच्छा को पूर्ण किया, उनके मन में जो भावना चिंगारी की भाँति कई वर्षों से सुलग रही थी, उसने शोलों का रूप धारण किया। गीता के

सम्पूर्ण अनुवाद के रूप में, जिसे उन्होंने केवल जनता की भाषा में ही लिखा। इस अनुवाद का नाम उन्होंने "गतई" रखा जिसका अर्थ है गीता माता, इस नाम में दोनों ही रूप विनोबा जी को नजर आने लगे।

...एक था पवित्र माँ का जिसकी इच्छा को वे जीते जी तो पूरी न कर सके थे किन्तु मरने के पश्चात् अवश्य ही उन्होंने उनकी इच्छा पूरी कर दी।

दूसरा रूप था, जन सेवा और ज्ञान प्रचार का, जिसे उन्होंने गीता को बहुत हीं सरल भाषा में पेश करके एक महान कार्य किया।

इस प्रकार से यह पुस्तक धार्मिक ज्ञान का भंडार होने के साथ-साथ विनोबा जी के जीवन में विशेष स्थान रखती है।

आज इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि गीता का यह अनुवाद अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। इस देश की बहुत सी भाषाओं में अनुवाद करके, 'सर्व सेवा संघ प्रकाशन', आम जनता तक पहुँचाया। आज मैं अक्सर लोगों को दुकानों पर से यह कहते सुनता हूँ कि, "विनोबा जी की गीता दीजिए।"

तो मुझे उनका दर्द भरा अतीत याद आता है, जिसमें उनकी माँ का प्यार ठाठें मारता नजर आता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस महान सन्त के जीवन पर अपनी माँ का सबसे अधिक प्रभाव रहा बचपन में ही उन्हें जो धार्मिक विचारधारा मिली, उसका सारा श्रेय माँ रुक्मिणी देवी को ही जाता है, माँ सुबह उठती थी सबसे पहले यह मन्त्र पढ़ती थी।

सारे ब्रह्माण्ड के नायक मेरे अपराधों को माफ कर।
अखंड ब्रह्माण्ड नायक—मइया अपराधाना क्षमा का
इस मन्त्र का प्रभाव विनोबा जी पर बहुत पड़ा था।

एक घटना और ।

माँ रुक्मिणी देवी बहुत दयालु थीं । हर बेसहारा को सहारा देना उनका कर्त्तव्य ही बन गया था । ऐसे ही उन्होंने एक बेसहारा लड़के को, अपने घर में रख लिया, वे उस लड़के को अपने बेटों से भी अधिक प्यार करती थीं, यहाँ तक कि उस लड़के के लिए सदा गर्म खाना ही तैयार होता, भले ही विनोबा जी को ठण्डा खाना क्यों न मिले ।

यह भेदभाव की बात, विनोबा जी सहन न कर सके एक दिन उन्होंने अपनी माँ से पूछ ही लिया कि आखिर आप इस लड़के को सदा गर्म खाना क्यों देती हैं? जबकि मुझे कई बार ठण्डा खाना भी मिलता है । यह तो अन्याय है, भेदभाव है, जो मनुष्य मनुष्य के बीच में दीवार खड़ी करता है ।

माँ ने अपने बेटे की शिकायत सुन बड़े धैर्य से कहा ।

विन्या, तुम ठीक कहते हो, मैं अभी तक सब लड़कों को एक जैसा नहीं मान सकती हूँ । मैं तुम्हें अपना बेटा मानती हूँ और इस बेसहारा विद्यार्थी को भगवान् । अब तुम यह जान लो कि जिस दिन मैं तुम्हें भगवान समझने लग जाऊँगी तो यह भेदभाव ही समाप्त हो जाएगा । माँ के इस उत्तर का विनोबा जी पर बहुत गहरा असर हुआ, वे अब अपने आप की कमियों को दूर करके माँ की नजरों में वही रूप बनने का प्रयत्न करने लगे ।

विनोबा जी के मन में माँ के लिए अत्यन्त श्रद्धा और असीम प्रेम था, दोनों ही माँ बेटे एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते थे, जब भी घर में कोई त्यौहार मनाया जाता तो विनायक माँ के साथ होते । नाग पूजा के उत्सव पर माँ अपने बेटे से एक ही नाग विशेष रूप से बनवाया करती थीं, हालांकि विनायक उनसे कई बार कहते कि, माँ बाजार में लकड़ी के बने बनाए काफी अच्छे नाग मिल जाते हैं, मगर माँ का एक ही उत्तर होता ।

"बेटा विन्या, जो आनन्द तेरे हाथ से बने नाग से पूजा करने में आता है, वो किसी और में नहीं ।" यह था प्यार माँ बेटे का ।

भक्ति भाव

बचपन में विनोबा जी अपनी माँ, दादा, दादी के साथ गगोदा में रहते थे, उनके पिता नरहरि राव, बड़ौदा में थे, वे वर्ष में कभी-कभी गगोदा आ जाते, एक बार जैसे ही उनके पिता घर पर आए तो माँ रुक्मिणी देवी ने अपने बेटे से कहा—

"देखो विन्या, आज तुम्हारे पिताजी तुम्हारे लिए शहर से बहुत सारी मिठाइयाँ लेकर आये हैं ।"

…विनोबा जी और बच्चों की भाँति मिठाई का नाम सुनते ही बड़े खुश हुए और गए भागे-भागे अपने पिताजी के पास, नरहरि ने अपने बेटे को एक बड़ा सा पैकट दे दिया, परन्तु उसमें से मिठाई के स्थान पर निकला, रामायण, महाभारत, और भागवत्…।

"विनोबा जी, उन पुस्तकों को लेकर भागे-भागे अपनी माँ के पास गये और बोले, देखो माँ, पिताजी मेरे लिये कैसी मिठाइयाँ लाये हैं ।"

माँ ने बड़े प्यार से, उन पुस्तकों को देखा और बोली बेटा, यह तो धर्म ज्ञान है, यह तो जीवन की सबसे बड़ी मिठाई है, यही असली जीवन है ।

विनोबा ने माँ की बातों को ध्यान से सुना, उनके मन में तो पहले से ही भक्ति-भाव का सागर ठाठें मार रहा था । यह तो एक नई लहर थी जो उन्हें ज्ञान मार्ग की ओर ले जा रही थी ।

विनोबा जी के पिता श्री नरहरि राव, बहुत ही गुस्से वाले थे वे जरा सी भूल पर अपने बच्चों को खूब पीटा करते। कोई भी भूल वे सहन नहीं करते थे। यहाँ तक कि यदि वे घर पर होते तो समझो दिन में एक बार तो अवश्य मार पड़ेगी ही, स्वयं विनोबा जी इस बारे में सुनाते हैं कि—

एक बार कई दिनों तक मेरे पिताजी ने मुझे नहीं पीटा तो मैंने स्वयं उनसे जाकर पूछा कि "पिताजी क्या बात है आपने मुझे बहुत दिनों से पीटा क्यों नहीं ?"

मेरे पिताजी ने बड़े प्यार से मुझे देखा और प्यार से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए बोले, विन्या, अब तू सोलह वर्ष का हो गया है, हमारे धर्म शास्त्रों का यह कहना है कि जब लड़का सोलह वर्ष का हो जाये तो उससे मित्रता का व्यवहार कर लेना चाहिए।

अपने पिता की इस धार्मिक विचारधारा से बहुत प्रभावित हुए थे विनोबा जी, वैसे ही उस घर की हर बात धार्मिक विचारों के गिर्द ही घूमा करती थी। इसी वातावरण में विनोबाजी ने अपना बचपन व्यतीत किया।

केवल यही नहीं उनके पिता समय के बारे में बहुत पाबंद थे—उसका उदाहरण मैं यहीं पर दे रहा हूं।

नरहरि राव जी को शतरंज खेलने का बहुत शौक था, वे हर रोज ही अपने पड़ौसी डाक्टर जोगलेकर के यहाँ शतरंज खेलने जाया करते। मगर केवल आधे घण्टे तक, हालाँकि शतरंज और ताश के खेल के बारे में यह बात प्रसिद्ध है कि, इस खेल में समय की कोई सीमा नहीं। मगर नरहरि जी तो अपनी घड़ी को देखकर ही चलते थे, खेल का भले ही कुछ परिणाम निकले इससे उन्हें कुछ नहीं लेना था। उन्हें तो केवल आधा घण्टा ही खेलना था। हालाँकि डाक्टर साहब कई बार उनसे प्रार्थना करते कि, भाई यह अधूरी बाजी तो पूरी कर लो, नरहरि हंसकर यही कहते कि

भाई बाजी अधूरी हो या पूरी, इससे मुझे कुछ नहीं लेना। हाँ मुझे तो केवल अपनी घड़ी की ओर देखना है, जहाँ आधा घंटा पूरा हो चुका है।

इस घटना के प्रकाश में आप यह सोच सकते हैं कि नरहरि जी समय के कैसे पाबन्द थे, उनकी छाया में पले विनोबा जी पर भी तो यही प्रभाव पड़ा था। केवल यही नहीं, नरहरि जी के हृदय में देश भक्ति, देश प्रेम, अपने ही देश की बनी चीजों से बहुत प्यार था। इसका एक उदाहरण, मैं आपको और देता हूं।

एक बार उन्होंने अपने बेटे को यह पत्र लिखा जिसमें साफ शब्दों में लिखा था कि "इस पत्र की स्याही, कागज, कलम किसी यन्त्र से नहीं बनाए गये, यह सब पूर्ण रूप से स्वदेशी हैं इन्हें मैंने स्वयं अपने ही हाथों से बनाया है।"

विनोबा जी ने जैसे ही यह पत्र गांधीजी को दिखाया तो वे बहुत ही खुश हुए थे। उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा, जैसे स्वदेशी भावनाओं के उनके सारे सपने सच हो रहे हैं। नरहरि जैसे लोग यदि इस देश में पैदा होने लगे तो वे दिन भी दूर नहीं जब सारा देश स्वदेशी चीजों का प्रयोग करने लगेगा।

यह थी विचारधारा उनके माता-पिता की, जिसका प्रभाव बाल विनायक पर पड़ा था। इन घटनाओं से यह बात तो स्पष्ट हो जाती है कि, विनोबा जी के जीवन में जो कुछ भी परिवर्तन आए उनमें, उनके माता-पिता का सबसे अधिक योगदान रहा है, यहाँ पर मैं विशेष रूप से उनकी धार्मिक शिक्षा की बात कहने वाला हूं। वह यह शिक्षा उन्हें अधिक तो अपनी माँ की प्रेरणा से ही मिली। जैसा मैंने पिछले पृष्ठों में लिखा है कि उन्हें माँ ने कहा था कि, सरल गीत का अनुवाद, तुम स्वयं ही क्यों न करते बेटे···।

यही बात तो उनके मन में बैठ गई थी, और लोगों ने देखा कि विनोबा जी ने, माँ की इच्छा कैसे पूरी की।

माँ के साथ-साथ ही पिता नरहरि राव ने भी अपने बेटे को भव्य मिठाई के स्थान पर गीता, रामायण, महाभारत जैसी पुस्तकें लाकर दी हों तो बेटे के विचार कैसे हो सकते हैं, यह बात आज केवल विनोबा जी की ही नहीं, बल्कि देश के करोड़ों बच्चों के लिए नई राहें खोलेंगे। उन माँ बाप को अपने बच्चों के भविष्य के बारे में ऐसे ही गम्भीरता से सोचना होगा, जो अपने बच्चों को आदर्शवादी बनाना चाहते हैं।

आज विनोबा जी का जीवन हमारे सामने है, अब हम उन्हें "बीसवीं सदी का महान सन्त" कहते हैं तो हमें यह भी सोचना ही होगा कि इस महान कार्य की नींव में कौन से सिद्धान्त थे जिन्होंने एक साधारण बालक को धरती से उठाकर आकाश पर पहुंचा दिया। हमारे देश के सभी माता-पिता को, इससे प्रेरणा लेनी चाहिए। आज हमें यह बिल्कुल नहीं भूलना चाहिए कि बच्चों के जीवन को बनाने या बिगाड़ने में माँ-बाप का बहुत बड़ा हाथ होता है।

विनोबा जी की देश भक्ति, जनता सेवा, धर्म प्रचार को जब मैं देखता हूं तो मुझे सबसे पहले, उनके माँ-बाप की याद आती है।

शिक्षा और बचपन

जैसा मैं अपने पाठकों को पीछे बता चुका हूँ कि विनोबा जी के पिता बड़ौदा में नौकरी करते थे। बाकी परिवार के सदस्य गगोदा में शंभुराव जी के साथ रहते थे। माता रुक्मिणी देवी कभी अपने पति के पास होती तो कभी अपने बच्चों के पास।

विनोबा की प्रारम्भिक शिक्षा धार्मिक शिक्षा से ही आरंभ हुई थी। बाद में मराठी समान्य ज्ञान भी दिया गया। सन 1903 में जब वे नौ वर्ष के थे बड़ौदा चले गए और वहीं पर उन्हें तीसरी कक्षा में दाखिल करवाया गया। किसी ने ठीक ही कहा है :

"होनहार विरवान के होत चिकने-चिकने पात।"

यही हाल था बालक विनायक का वे आरंभ से ही हर कक्षा में प्रथम आते थे। सारे स्कूल में ही इस बालक ने अपने नाम की धूम मचा कर रख दी थी। जिसका फल विनायक को यह मिला कि उन्हें छात्र वृत्तियां मिलती रहीं। इस बालक की बुद्धि का आप इसी से अंदाजा लगा सकते हैं कि छठी कक्षा की अंतिम परीक्षा में मराठी में उन्हें 95 प्रतिशत और संस्कृत में 85 प्रतिशत अंक प्राप्त हुए। यह उनकी उस स्कूल में अंतिम परीक्षा थी। इसके पश्चात् उन्हें बड़ौदा हाई स्कूल में प्रवेश मिला। उन दिनों हाई-स्कूल में अंग्रेजी के ज्ञान की बहुत जरूरत थी। अंग्रेजी राज में हर ओर अंग्रेजी का ही बोलबाला था। इसलिए उनके पिता जी तीन वर्ष तक स्वयं घर पर उन्हें अंग्रेजी पढ़ाते रहे।

विनोबा जी को स्कूल की पुस्तकों के साथ-साथ दूसरी जीवन उपयोगी पुस्तकें पढ़ने का बहुत शौक था। वास्तव में देखा जाए तो स्कूली पुस्तकें तो बच्चे मजबूरी समझ कर पढ़ते हैं किन्तु मानव ज्ञान के लिए इनके साथ-साथ दूसरी पुस्तकों का पढ़ना अति आवश्यक होता है। यही कारण था कि विनोबा जी का अधिक समय सार्वजनिक पुस्तकालय में ही व्यतीत होता। उनका सबसे प्रिय विषय गणित था। उन्होंने स्वयं अपनी इस पसंद के बारे में लिखा है।

"भगवान के पश्चात् यदि मुझे कोई चीज सबसे प्रिय है तो वह गणित है।"

शिक्षा में ही इतने खोए रहते थे विनोबा कि खेल-कूद के बारे

में कभी सोचा ही नहीं था। सच बात तो यही है कि जितने भी विद्यार्थी पढ़ने में अधिक रुचि लेते हैं उन्हें खेल का समय मिल ही नहीं पाता। इसके साथ-साथ उन्हें मित्रों में साथ घूमने का बहुत शौक था। शायद पढ़ने के पश्चात् वे अपनी थकावट दूर करने के लिए ऐसा करते थे। लोकमान्य तिलकजी के साप्ताहिक समाचार पत्र केसरी को वह वहुत ही मन लगा कर पढ़ते थे। इसी पत्र से उन्हें आजादी की लहर के बारे में पूरी-पूरी जानकारी मिलती थी। जो स्वयं उन्हें इस बात की प्रेरणा देती थी कि विनायक यह देश तुम्हारा भी है। भारत माँ सदियों से गुलामी की जंजीरों में जकड़ी हुई है। जब तक इसकी जंजीरें न कटेंगी तो उन्हें शांति कहाँ मिल सकती है। गुलाम देश के युवकों का जीवन भी क्या है ?

लोकमान्य गंगाधर तिलक जी और चिपलणकर उनके सबसे प्रिय नेता थे। उनसे ही अधिक प्रेरणा उन्हें मिलती थी। सन 1908 में जब तिलक जी को अंग्रेजी सरकार से आजादी मांगने के अपराध में छः वर्ष की कड़ी कैद की सजा सुनाई तो विनोबा जी को सब से अधिक दुःख हुआ।

बालक विनायक छोटी आयु से ही तप और त्याग के मार्ग पर चलने लगे थे। इस बालक के तप की बात आप इस बात से ही सोच सकते हैं कि वे अपनी छोटी आयु से ही धरती पर सोने लगे। इस पर भी गद्दे और तकिए का प्रयोग नहीं करते थे। गर्मी और सर्दी हर मौसम में ही ठंडे पानी से नहाते थे। वे नंगे पाँव रहते जूता नहीं पहनते थे। भले ही उन्हें कितनी भी गर्मी में बाहर चलना पड़ता वे सदा नंगे पाँव रहते।

यह संकेत थे इस बात के कि यह बालक एक आदर्श की ओर बढ़ रहा है। उसका जीवन सबसे अलग है। उसके मन में संन्यास लेने की मनोवृत्ति जन्म ले रही है।

विनोबा के पिता यह चाहते थे कि उनका बेटा अंग्रेजी और फ्रेंच भाषा का अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करें लेकिन उनके बेटे के मन में तो अपनी देश की भाषाओं के लिए ही बहुत प्यार था, विशेष रूप से उन्हें अपनी मातृ भाषा। मराठी से बहुत ही प्यार था। उसके साथ ही उन्हें संस्कृत भाषा भी बहुत ही प्रिय थी। विनोबा जी के देश प्रेम और देश भाषा प्रेम का उदहरण इस बात से मिल जाएगा कि यदि कोई भी उनका साथी अंग्रेजी में उनसे बात करता तो वे झट से उसे कहते कि—

"क्या तुम्हारी माँ अंग्रेज है ?"

आज की युवा पीढ़ी जो अंग्रेजी के पीछे पागल हुई जा रही है उसे इस महान संत के जीवन से बहुत कुछ सीखना होगा। जिसे बचपन से ही अपनी सभ्यता अपनी भाषा से प्रेम था। जिसने उस आयु में ही सब कुछ त्याग दिया जिस उम्र में बच्चों को संसार के हर सुख की जरूरत होती है।

यही नहीं एक पढ़े-लिखे और नौकरी पेशा बाप का बेटा होते हुए भी उन्होंने कभी अंग्रेजी कपड़े नहीं पहने। विद्यार्थी जीवन में कुर्ता-पाजामा और टोपी पहनते, कभी अपने बालों को अंग्रेजी ढंग से नहीं कटवाया। लम्बे-लम्बे बेढंगे बाल खुला कुर्ता देखकर कुछ साथी उन से कुछ कहते तो वे झट से कह देते—

"अरे तुम क्या नाई हो जो मेरे बालों की ओर देखते हो।"

चाय से उन्हें बहुत घृणा थी वे अपने साथियों से भी यही कहा करते कि चाय मत पीओ यह बुरी चीज है, चाय के बारे में मैं एक बात सुनाता हूँ।

विनोबा जी के एक मित्र विद्यार्थी की चाय पीने की बहुत आदत थी। वे अकसर उससे चाय छोड़ने को कहते किन्तु वह मित्र नहीं मानता था। एक बार वह नहाने के लिए गुसलखाने में गया तो विनोबा जी ने बाहर से ताला लगा कर उसे अंदर ही

बंद कर दिया।

अरे भाई यह क्या—मुझे अंदर क्यों बंद कर दिया ?

"इसलिए कि तुम चाय बहुत पीते हो, आज से तुम्हें यह वायदा करना होगा कि मैं कभी चाय नहीं पीऊँगा।"

"अच्छा भाई मैं आज से वायदा ही नहीं बल्कि यह प्रतिज्ञा भी करता हूँ कि मैं कभी चाय नहीं पीऊंगा। बस अब तो ताला खोलो।"

"विनोबा जी ने ताला खोल दिया।"

इस घटना से आप यह अंदाजा लगा सकते हैं कि विनोबा जी जिस बुरी चीज को स्वयं पसन्द नहीं करते थे वे दूसरों को भी इस बुराई से दूर रखना चाहते थे।

एक बार विनोबा के सारे साथियों ने मिलकर यह निर्णय किया कि इस वर्ष शिवाजी जयंती पास वाले जंगल में जा कर मनाएँगे इसके लिए उन्हें स्कूल से भी गैर हाजिर रहना पड़ेगा इस बात की भी उन्होंने कोई चिंता न की, सबके सब लड़के जंगल में शिवाजी जयंती मनाने के लिए इकट्ठे हो गए, वहीं पर सब लोगों को यह भी चिंता सता रही थी कि वे सब के सब बिना आज्ञा के स्कूल से गैर हाजिर हुए हैं इसके लिए उन्हें जुर्माना भी होगा। इस पर विनोबा जी ने अपने सारे साथियों से कहा कि वे अपनी जेब में (चार-चार आने) यह उस समय का सिक्का था तैयार रखे जैसे ही मास्टर जी उनसे कुछ कहें उनकी मेज पर यह पैसे रख दिए जाएँ।

शिवाजी जयंती खूब धूम से उस जंगल में मनाई गई।

दूसरे दिन सुबह कक्षा में आते ही मास्टर जी ने सब से पहले यही पूछा कि तुम लोगों ने कल शिवाजी जयंती स्कूल में क्यों नहीं मनाई ?

विनोबा झट से उठ खड़े हुए और बोले—

इस गुलामी के घेरे में हम शिवाजी जयंती कैसे मना सकते हैं सर ?

यह उत्तर सुनकर मास्टर जी को बहुत क्रोध आया और वे कुछ कहने ही लगे थे कि इससे पहले ही विनोबा ने लड़कों को इशारा किया।

"बस फिर क्या था, सबके सब लड़के उठे और बारी-बारी से मास्टर जी की मेज पर जुर्माने के चार-चार आने रखते चले गये।"

"मास्टर जी, सब बात समझ गए थे, इसके साथ ही उन्हें बच्चों का साहस देखकर बहुत खुशी हुई, इन छोटे बच्चों के मन में भी आजादी की ज्योति जल रही थी।

—इस प्रकार से उनका विद्यार्थी जीवन चल रहा था।

विनोबा जी के बारे में मैं पिछले पृष्ठों पर यह खुलकर लिख चुका हूँ कि वे बहुत ही सादा रहते थे, बनावट की हर चीज से उन्हें घृणा थी, एक बार वे सेंट्रल लायब्रेरी में बैठे बड़े आनन्द से पढ़ रहे थे। उस दिन गर्मी कुछ बहुत थी, उन्होंने अपना कुर्ता भी उतार कर एक ओर रख दिया और नंगे शरीर कुर्सी पर बैठे बड़े आनन्द से पढ़ने लगे।

"—लायब्रेरी के एक क्लर्क ने जैसे ही विनोबा को इस तरह बैठे देखा तो उसने लायब्रेरियन से जाकर शिकायत की।

लायब्रेरियन ने क्रोध में आकर, उसी समय विनोबा को अपने पास बुलाया और कहा।

"तुम जानते नहीं हो कि सभ्यता क्या होती है ?"

"मैं अच्छी तरह जानता हूं।" विनोबा ने उत्तर दिया।

"तो फिर आप यह बताने का कष्ट करेंगे कि, सभ्यता किसे कहते हैं ?" उसने व्यंग्य किया।

"तो सुनिये। हमारे देश की सभ्यता यह कहती है कि यदि

हम किसी से बात कर रहे हों और पास कुर्सी खाली पड़ी हो तो सबसे पहले उसे बैठने के लिये कहा जाता है। विनोबा ने बेधड़क होकर कहा।

अंग्रेज लायब्रेरियन, इस लड़के के मुँह से इतना स्पष्ट और दिलेरी भरा उत्तर सुनकर हैरान रह गया था, उसने झट से विनोबा को पास पड़ी कुर्सी पर बैठने के लिए कहा और फिर बड़े प्यार से विनोबा जी से बातें करने लगा।

तब विनोबा जी ने, उस अंग्रेज से कहा कि हर देश का अपना-अपना वातावरण और अलग मौसमों के हिसाब से उनका जीवन चलता है। भारत जैसे देश में जहाँ पर गर्मी बहुत अधिक पड़ती है आदमी वहुत से कपड़ें अपने शरीर पर कैसे लाद सकता है।

अंग्रेज लायब्रेरियन ने विनोबा के मुँह से जैसे ही इतनी खुली बातें सुनीं तो वह बहुत ही खुश हुआ उसने युवा पीढ़ी में ऐसा कोई युवक नहीं देखा था जो किसी अंग्रेज से इस तरह से खुलकर बातें कर सके, उन्होंने दिल खोलकर विनोबा जी की प्रशंसा की, और कहा कि मैं तुम्हारे इस उत्तर से बहुत ही खुश हुआ हूं।

इस प्रकार से, विनोबा अपने जीवन की मंजिल तय करते हुए संघर्ष की ओर चलने लगे थे।

पहला पग

वड़ौदा में ही, विनोबाजी ने विद्यार्थी मण्डल की स्थापना करके अपने जीवन संग्राम का पहला कदम उठाया। इस मंडल में रघुनाथ श्रीधर, घोत्रे, गोपाल राव काले, और महादेव (बाबाजी) मोके, उनके सहयोगी मित्रों में से थे। हर रविवार को यह सब किसी

एक मित्र के घर इकट्ठे होते और वहाँ देश के बारे में एवं अपने पुराने ग्रंथों के बारे में खुलकर चर्चा करते। विनोबा जी का तो कहना ही क्या था ऐसा लगता था इस मण्डल की स्थापना से उन्हें काफी खुलकर इन लोगों के सामने बोलने का मौका मिल गया है। वे हर बात को समझते और अपने मन की भावनाओं को सब के सामने रखते।

इन मित्रों की अपनी एक लायब्रेरी भी थी, जिसमें अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी और संस्कृत भाषा की कुल मिलाकर, 2000 से अधिक पुस्तकें थीं। इस पुस्तकालय को, गरीब और जरूरतमंद बच्चों के लिए खोल दिया गया था। सब विद्यार्थी मिलकर इस पुस्तकालय का पूरा-पूरा लाभ उठाते जिसका चन्दा केवल चार आने मासिक था।

रघुनाथ श्रीधर घोत्रे अपने संस्मरणों में लिखते हैं कि, इन साप्ताहिक बैठकों में विनोबा के कुछ भाषण तो बहुत ही जोरदार थे। इन भाषणों से सभी साथी बहुत प्रभावित हुए थे, किन्तु कितने मज़े की बात थी कि विनोबा इन भाषणों के बारे में अपने माता-पिता एवं भाइयों से कभी कुछ न कहते। यही कारण था कि उन्होंने अपने घर पर कभी कोई सभा नहीं बुलाई, रातों को वे काफी देर से आते भी तो कभी माँ ने यह नहीं पूछा था कि तुम्हें देर क्यों हो गई।

बाबाजो मोके विनोबा के प्रिय मित्रों में एक विशेष स्थान रखते थे, एक बार इन्होंने कहा कि—

"भाई विनोबा, महाराष्ट्र में आज तक कोई ब्राह्मण सन्त नहीं हुआ।"

"नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता—।" विनोबा ने कहा।

और वास्तव में ऐसा ही हुआ था, विनोबा जी को खोज करने से यह बात का पता चल गई कि बाबाजी ठीक कह रहे हैं । उन्हें

बाबाजी के सामने अपनी हार माननी पड़ी, किन्तु इसके साथ ही विनोबा ने कहा ।

"बाबाजी, यदि यह बात है, तो मैं इस कमी को पूरा करते हुए आपको एक दिन सन्त बनके दिखाऊंगा ।"

यह वे शब्द थे जो युवक विनायक ने भावना में आकर कह डाले । शायद उन्हें ब्राह्मण जाति का यह अपमान पसन्द नहीं था । उन्होंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि मैं महाराष्ट्र के इस इतिहास की कमी को पूरा करके रहूंगा । आज के पश्चात् मैं किसी को भी यह कहने का अवसर नहीं दूँगा कि महाराष्ट्र में कभी कोई ब्राह्मण सन्त पैदा नहीं हुआ ।

"और आज जब मैं विनोबा जी को एक महान् सन्त के रूप में देखकर उनके जीवन के बारे में लिख रहा हूं तो मुझे बार-बार उनके यह शब्द याद आते हैं, जो उन्होंने भावना में बह कर कह डाले थे ।

शायद यही कारण था कि विनोबा ने प्राचीन धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन खूब मन लगाकर किया, लोकमान्य तिलक जी से तो वे बचपन से प्रभावित थे। तिलक जी की महान् रचना "गीता रहस्य" को उन्होंने खूब मन लगाकर पढ़ा। वे अपने मित्रों में अकसर इस महान् कृति की चर्चा भी करते।

काले जी कहते थे कि इस युवक विनायक के अन्दर शंकराचार्य के और महात्मा बुद्ध की करुणा का अद्भुत समन्वय है। उस दिन जिस भी पंडित ज्योतिषी ने विनोबा जी का हाथ देखा, उसने यही कहा कि यह एक दिन महान् व्यक्ति बनेगा।

विद्रोह की भावना

सन् 1913 हाई स्कूल की परीक्षा पास करने के पश्चात् विनोबा ने बड़ौदा कालेज में दाखिला ले लिया। किन्तु कालेज में पहुंचते ही जैसे उनकी विद्रोही आत्मा जाग उठी हो, उनके जीवन में बड़ा विचित्र सा मोड़ आ रहा था।

"स्कूल से लेकर, कालेज की पुस्तकों तक पहुंच कर उन्हें यह एहसास होने लगा था कि यह सब ढोंग सा है, क्या रखा हैं इन किताबों में ?"

"इन्सान तो ज्ञान पाने के लिए पढ़ता है, किन्तु इन पुस्तकों में ज्ञान कहाँ है ?" यह तो केवल युवकों को ऐसे प्रमाण पत्र देती हैं जो उन्हें नोकरी की जंजीरों में जकड़ दें। यह विदेशी सरकार युवावर्ग के भविष्य से खिलवाड़ कर रही है। इन स्कूल और कालेज की पुस्तकों को पढ़कर कोई बुद्धिजीवी नहीं बन सकता···।

महात्मा बुद्ध, भगवान् श्रीकृष्ण, श्री राम—जैन मुनि से लेकर जगत गुरु शंकराचार्य तक कितने ही महान् लोग इस संसार में आए, हर धर्म के महान् लोग, वे क्या सबके सब कालेजों से ज्ञान पढ़कर आए थे।

—नहीं···नहीं···नहीं···

ज्ञान तो एक प्राकृतिक प्रकाश है। ज्ञान के लिए इन प्रमाण पत्रों की जरूरत नहीं, यह सब बेकार है, यह तो अधिक से अधिक एक नौकरी दिला सकते हैं—यहीं से विद्रोह की भावना ने जन्म लिया था ।

एक दिन रसोई में अपनी माँ के साथ बैठे विनोबा ने कागजों का एक पुलिंदा लेकर आग की ओर बढ़ा दिया।

"विन्या ! यह क्या कर रहा है तू ?"

"मैं अपने यह सारे प्रमाण पत्र जला रहा हूँ माँ।"

"…अरे, तुझे क्या हो गया है—? क्या तुझे नहीं पता कि इन प्रमाण पत्रों से तो तेरा जीवन बनेगा। इनकी तो तुझे हर स्थान पर जरूरत पड़ेगी। यह तो तूने दिन रात परिश्रम करके प्राप्त किए हैं।"

"माँ की बात सुनकर भी विनोबा के बढ़े हाथ रुके नहीं, उन्होंने तो अपने जीवन मार्ग को खोज लिया था, उनके जीवन के अंधेरे समाप्त हो गए थे। क्या रखा था इन डिग्रियों में—? वास्तविक ज्ञान के लिए तो इन्सान को साहित्य पढ़ना चाहिए।

उन्होंने सारे प्रमाण पत्र जला डाले विद्रोही आत्मा ने एक नया मोड़ लिया था।

"विनोबा ने कालेज के अपने मित्रों से भी कह दिया कि वह इस कालेज को छोड़कर, ब्रह्म की साधना में लगना चाहते हैं।"

इसके लिए तुम कहाँ जाओगे, लोकमान्य तिलक के पास अथवा—एनीबेसेंट के पास…? एक मित्र ने पूछा।

"नहीं मित्र, अभी लोकमान्य तिलक या ऐनीबेसेंट के पास जाने की हिम्मत तो मुझमें नहीं है।"

"तो फिर कहाँ जाओगे?" क्या हिमालय पर जाने का इरादा है।

"नहीं मित्र, हिमालय पर जाकर भी इन्सान को क्या मिल सकता है, जिस इन्सान को इतने बड़े संसार में रहकर भी ज्ञान नहीं मिला वह उन बर्फ से भरे पत्थरों से क्या प्राप्त कर सकता है। विनोबा ने बड़े धैर्य से उस मित्र को उत्तर दे दिया।

25 मार्च, सन् 1916 को बम्बई में इन्टरमीडियेट की परीक्षा आरम्भ होने वाली थी। विनोबा अपने मित्र गोपाल राव काले के साथ बड़ौदा से, बम्बई जाने वाली गाड़ी पर सवार हुए।

किन्तु यह गाड़ी विनोबा जी के जीवन में एक नया मोड़ लेकर आयी। वे अपने मित्र काले को एक पत्र देकर उस गाड़ी से उतर

गए और बोले कि यह पत्र, परीक्षा समाप्त होने के पश्चात् ही डाक में डालना, यह पत्र उन्होंने अपने पिता के नाम लिखा था, जिसमें उन्होंने लिखा।

"पिताजी, मैं परीक्षा देने की बजाए, कहीं और जा रहा हूं। मैं भले ही कहीं पर जाऊं किन्तु आप मुझ हर विश्वास रखें कि मैं कोई भी गलत काम नहीं करूंगा।"

सूरत रेलवे स्टेशन से विनोबा जी ने काशी जाने के लिए भुसावल की गाड़ी पकड़ी।

उधर पिताजी को जैसे ही अपने पुत्र का पत्र मिला तो उनके मन को बहुत दुःख हुआ, उन्हें ऐसा लगा जैसे उनके सारे ही सपने बिखर गए हों। सारी आशाएँ लुट गईं। बड़ा पुत्र होने के नाते वे तो विनायक को ही अपने बुढ़ापे का सहारा समझते थे। भारतवर्ष में हर माँ-बाप यही सोचते हैं। किन्तु···विनोबा जी की बात अपनी थी।

वे तो सीधे काशी जी पहुँच गए थे। पिता की भाँति उनके अपने सपने थे, जिनकी पूर्ति बहुत जरूरी थी। हाँ इनको पूरा करने के लिए ही तो उन्होंने बनारस पहुँचकर संस्कृत साहित्य के साथ-साथ वेदों और उपनिषदों का अध्ययन भी किया। यह कार्य अहिल्याबाई, स्थानीय लायब्रेरी में ही पूरा हो रहा था, रहने के लिए ताल्याटोपे की बहन का मकान था जिसकी पाँचवीं मंजिल पर विनोबा रहते। खाने के लिए मंदिरों के अन्नासनों में ही जाते। भोजन के साथ ही उन्हें दो पैसे रोज दक्षिणा भी मिलती थी। इन दो पैसों से वे शाम को दही और शकरकंद का नाश्ता कर लेते। हर रोज सुबह उठते और गंगा घाट पर जाकर नहाते। फिर वहीं पर ईश्वर-पूजा में लग जाते। घंटों तक पूजा में लगे रहते, खाली समय तो शायद उनके जीवन में एक क्षण भी नहीं था। जब भी कभी उन्हें समय मिलता तो वे मराठी कविताएँ लिखते, जिससे

उनका कवि रूप भले ही जनता के सामने तो नहीं आया। हाँ वे इन कविताओं को गंगा मैया को अर्पण करते रहे। गंगा जी के विषय में स्वयं विनोबा जी ने गीता-प्रवचन में लिखा है।

"जब मैं काशी में था तो मैं रोज गंगाजी जाता था, और वहाँ पर घंटों बैठकर जीवनधारा की भाँति बहती गंगा मैया को देख जीवन के बारे में सोचता रहता। मूक होकर यह सब दृश्य देखता रहता। शंकर भगवान की जटाओं से हिमालय से अवतरित उस जगजननी को देखकर मन को कितनी शान्ति मिलती।"

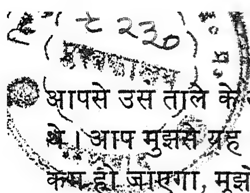
एक बार विनोबा जी ने सोचा कि अपने कमरे को लगाने के लिए ताला खरीद लूँ। यही सोचकर वे रास्ते में ही पड़नेवाले एक दुकानदार के पास गए, और उससे एक ताला माँगा। दुकानदार ने सीधे-सादे विनोबा जी को देखकर उस ताले के दाम उस समय के सिक्के (दस आने) साठ पैसे माँग लिए जबकि उसकी कीमत केवल (तीन आने) करीब बीस पैसे ही थे।

"—विनोबाजी ने हँसकर उस दुकानदार की ओर देखा और उसे उसके मुँहमाँगे दाम चुकाकर कहा, भैयाजी इसके दाम तो केवल तीन आने ही हैं किन्तु फिर भी मैं आपको दस आने ही दे रहा हूँ।"

इस सजा को दुकानदार, उस समय तो नहीं समझा, किन्तु जब उसकी दुकान के सामने से हर रोज विनोबा जी गंगाजी की ओर आते-जाते तो उसकी आत्मा अन्दर से कहती कि तुम धोखेबाज हो—तुमने एक सीधे-सादे आदमी को लूटा है—

हर रोज दुकानदार के साथ यही होता।

धीरे-धीरे वह दुकानदार हारता जा रहा था, उसकी आत्मा का बोझ बढ़ता ही जा रहा था। एक दिन दुकानदार हार गया। उसे अपने झूठ ने आ दबोचा और वह विनोबा जी के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो बोला—"महाराज, मुझे क्षमा कर दो, मैंने



आपसे उस ताले के सात आने अर्थात् (चालीस पैसे) फालतू लिए थे। आप मुझसे यह सात आने ले लो, इससे मेरी आत्मा का बोझ कम हो जाएगा, मुझे शांति मिलेगी।

काशीजी भी विनोबा ने बहुत कुछ पढ़ा। बहुत सीखा। काशी के पंडितों के साथ रहकर पुराने युग की धार्मिक बातें सुनीं, जो शायद उन्हें पढ़ने में नहीं मिली थीं, और वहीं पर वे जीवन के इस दोराहे पर खड़े हो गए थे।

एक ओर भारत में स्वतंत्रता संग्राम पूरे जोर से चल रहा था। बंगाल के क्रांतिकारी पूरी शक्ति से उठ खड़े हुए थे, उनके मन में यह भावना पैदा हो रही थी कि इन क्रांतिकारियों के साथ मिलकर कम से कम एक अंग्रेज को तो गोली मारकर समाप्त कर दें।

दूसरी ओर उनके सामने धर्मग्रन्थ पड़े थे, जिसके ज्ञान से उनका सारा जीवन-मार्ग ही बदल गया था। किन्तु काशी में उन्होंने धर्म ज्ञान के साथ-साथ मंदिरों में पड़ी गंदगी और गंगा घाट की ओर जानेवाले सारे रास्तों पर पड़ी गंदगी को देखा तो उनका मन बहुत ही दुःखी हो रहा था, जिस धर्म के लिए उनके मन में इतनी श्रद्धा थी उसी धर्म के चारों ओर गंदगी के ढेर पड़े हों। यह उनसे कहाँ सहन होता था, वे वहाँ से दूर भाग जाना चाहते थे।

उसी बीच 4 फरवरी, 1916 को उस समय के वाइसराय हिन्द लार्ड हार्डिग्ज के द्वारा काशी विश्वविद्यालय का शिलान्यास हुआ ता उस समय जो भाषण गांधी जी ने किया था। उसके समाचार कुछ मास के पश्चात् विनोबा जी और उनके साथियों ने बड़ौदा में पढ़े थे। इसी समारोह की अध्यक्षता श्री एनी बेसेंट ने की थी। जब वे अंतर्राष्ट्रीय थियोसाफिकल सोसाइटी की अध्यक्षा थीं। उन्होंने गांधीजी से भी इस समारोह में अपने विचार प्रकट करने के लिए कहा और साथ ही यह भी शर्त रखी कि वे केवल

प्रस्तुत विषय पर बोलें —

मगर गांधीजी ने वहाँ पर भी विद्रोह किया और वहाँ पर बैठे राजाओं, नवाबों को खुलेआम फटकारते हुए कहा कि वे अपने देश की गरीब जनता की ओर भी ध्यान करें। यह शाही ठाठ-बाट देश के साथ गद्दारी और जनता के साथ धोखा है। और साथ ही उन्होंने अंग्रेजों से भी कहा कि हमें आजादी चाहिए किन्तु इसके साथ ही उन्होंने क्रांतिकारियों में हिंसा की भी निंदा की। और खुले तौर पर अंग्रेजों से भी कहा कि हमें हर कीमत पर आजादी चाहिए, वे अपने देश वापस चले जाएँ। हमारा देश हमारे हवाले कर दें।

गांधीजी के इन शब्दों से सभा में काफी हंगामा हुआ। राजा लोगों और अंग्रेजों ने मिलकर गांधीजी का विरोध किया, जबकि वहाँ बैठी जनता ने गांधीजी की जय-जयकार की।

इस घटना का भी विनोबा पर बहुत प्रभाव पड़ा था। गांधी जी के विचारों ने उनके दिल में घर कर लिया था। इस एकांत में जब वे जीवन के दोराहे पर खड़े थे तो उनके सामने केवल गांधी जी का ही रास्ता ठीक नजर आया।

गांधीजी को पत्र लिखकर उन्होंने कुछ बातों के बारे में स्पष्टीकरण माँगा—इसके उत्तर में गांधीजी ने विनोबा को लिखा कि यह सब बातें पत्रों में नहीं हो सकतीं। इसके लिए आप मुझे अहमदाबाद में आकर आश्रम में मुझसे मिलो ताकि हम अपनी सारी शंकाएँ दूर कर सकें।

गांधी जी ने विनोबा को बहुत प्रभावित किया। उनकी विचारधारा आपस में मेल खा रही थी। विनोबा के मन में जो उथल-पुथल कितने वर्षों से मची हुई थी वह गांधीजी के विचारों को अपने साथ ले कुछ हद तक शांत हो गई थी, भले ही कुछ समय तक यह काम पत्रों से ही चलता रहा था।

गांधी जी से भेंट

"7 जून, सन् 1916।"

यही वह ऐतिहासिक दिन था, जब गांधी जी और विनोबा की पहली भेंट हुई।

"साबरमती आश्रम" यह स्थान भी किसी परिचय का मुहताज नहीं। राजनैतिक क्षेत्रों में साबरमती को भी पूजा-स्थल के समान माना जाता है, फिर इतनी विशेषता तो कुछ और भी बढ़ जाती है। जब देश के दो भावी नेता पहली बार एक दूसरे से मिले हों।

जिस समय विनोबा गांधी जी के पास पहुँचे तो वे रसोई में बड़े आनन्द से सब्जी काट रहे थे। दोनों में बातचीत भी सब्जी काटते-काटते ही हुई।

गांधी जी ने इस बीस वर्ष के युवक को बड़े ही ध्यान से देखा उसकी विचारधारा को उन्होंने पहले ही पत्रों से जान लिया था तभी तो सबसे पहले ही गांधी जी ने विनायक से कहा कि तुम इस आश्रम के सदस्य बन जाओ, इस समय देश को तुम्हारे जैसे तपस्वी, त्यागी युवकों की बहुत जरूरत है।

विनोबा जी ने इस भेंट के बारे में अपने शब्दों में यह लिखा है।

"काशी में रहते हुए मैंने सोचा था कि हिमालय पर जाऊँ। भीतर से एक अभिलाषा यह भी थी कि मैं बंगाल जाऊँ, परन्तु दोनों में से एक भी सपना पूरा नहीं हुआ। और भगवान ने मुझे गांधी जी के पास पहुँचा दिया। उनमें मुझे न केवल हिमालय की शान्ति मिली, बल्कि वह ज्वलन्त देश-भक्ति भी मिली, जो बंगाल की विशेषता है। मैंने अपने-आपसे कहा कि—

"मेरी दोनों ही आशाएँ पूरी हो गईं।"

उसी दिन से युवक विनायक ने गांधी जी ने इस आश्रम में रहना शुरू किया। वे सुबह से शाम तक आश्रम के कार्यों में लगे रहते। सुबह चार बजे उठकर बागों में काम करते फिर आश्रम के दूसरे कार्यों में जुट जाते।

एक दिन सुबह ही आश्रमवासियों ने विनोबा जी के मुंह से गीता के श्लोक सुने और साथ ही उपनिषदों का पाठ सुना। तब उन्हें इस बात का पता चला कि यह युवक तो संस्कृत और धर्म-शास्त्रों का महा पंडित भी है।

इसी आश्रम में युवक विनायक को विनोबा कहना आरम्भ किया गया। यह नामकरण करने वाले पहले पुरुष साबरमती आश्रम शाही मामाफड़के थे। महाष्ट्र में महापुरुषों और खासकर संतों को इज्जत के साथ इसी नाम से पुकारा जाता है जैसे कि संत ज्ञानेश्वर को ज्ञानीबा कहते हैं, और तुकाराम को तुकीबा—

बस मामा ने जैसे ही विनायक को विनोबा कहना आरम्भ किया तो दूसरे आश्रमवासी उन्हें बिनोबा कहकर पुकारने लगे थे।

यहीं से आरम्भ होता है सफर उनके राजनैतिक जीवन का। इसी आश्रम में रहकर विनोबा ने बहुत कुछ सीखा। गांधीजी के साथ मिलकर वे चक्की पीसते, गीता और उपनिषदों को साथ-साथ पढ़ते। तभी तो गांधी जी ने एक बार विनोबा का परिचय कराते हुए कहा था।

"आश्रम में जो थोड़े से रत्न हैं, उनमें यह युवक भी एक है। आश्रम में यह आशीर्वाद लेने के लिए नहीं, बल्कि आश्रम को आशीर्वाद देने के लिए आया है।"

स्वयं विनोबा ने एक आश्रमवासी के साथ बातचीत के दौरान कहा।

"आश्रम में आकर मैंने क्या पाया है, इसे केवल मैं ही जानता

हूँ ! पहले मेरी इच्छा थी कि देश के लिए कोई वीरता का कार्य करने में अपना नाम करूँ। परन्तु बापू ने इस मिथ्या अभिलाषा से मुझे मुक्त कर दिया। मेरे अन्दर क्रोध और दूसरे विकारों का जो ज्वालामुखी जल रहा था, उसे बुझाने का काम उन्हीं का है। अब मैं आश्रम में हर रोज आगे बढ़ रहा हूँ।"

कुछ ही समय के पश्चात् विनोबा जी के छोटे भाई बालकोवा भी आश्रम में आ गए थे। हालांकि यह बात विनोबा को अच्छी नहीं लगी थी। किन्तु फिर भी वह चुप रहे थे। यहीं पर मैं आपकी एक घटना और सुनाता हूँ जिसका सम्बन्ध विनोबा जी से बहुत गहरा है।

एक बार आश्रम का मैल उठाने वाला छुट्टी पर गया। अपने पीछे वह अपने बारह वर्ष के बालक को, यह काम करने के लिए छोड़ गया। वह लड़का सुबह ही मैले की भरी बाल्टी उठाए जा रहा था, जो बहुत भारी थी। उससे उठ नहीं रही थी। बालकोबा ने जैसे ही उस लड़के की मजबूरी देखी तो झट से उसके पास गए और मैले की भरी बाल्टी स्वयं उठाकर बाहर फेंकने चल दिए।

"विनोबा ने जैसे ही अपने भाई को ऐसा करते देखा तो वे बहुत ही खुश हुए और कहने लगे कि यही सबसे बड़ा त्याग मार्ग है। अब मैं भी तुम्हारे साथ मिलकर कल से यह सब काम किया करूँगा।"

इस बात से सारे आश्रम में एक खलबली-सी मच गई। सभी आश्रमवासी इस बात से दुःखी हो गए। क्योंकि उन्हें पता था कि यह दोनों भाई ब्राह्मण हैं, और साथ में पूर्ण ज्ञानी भी। भला एक ब्राह्मण कैसे इतना गंदा काम कर सकता है—सब लोगों ने विनोबा जी से ऐसा करने के लिए कहा, मगर विनोबा जी तो अपने फैसले पर अटल थे, उन्होंने कहा कि मैं ब्राह्मण होकर भी यह सब काम करूँगा, उन दिनों गांधी जी आश्रम में नहीं थे।

जब गांधीजी आश्रम में वापस आए तो उन्हें इस सारी घटना का पता चला तो उन्होंने विनोबा-विरोधी लोगों से कहा कि सफाई करना कोई पाप नहीं। मैला उठाना भी धार्मिक काम है। अब तो हम सबको मिलकर इस काम को करना होगा। जिन्हें यह काम पसन्द नहीं वे आश्रम को छोड़कर जा सकते हैं।

"गांधीजी के इस निर्णय से सबको हैरानी हुई। इस पर कुछ लोग आश्रम छोड़कर चले गए जिनमें स्वयं गांधीजी की अपनी बहन भी थी।"

इसी आश्रम में विनोबा जी ने चरखा कातने का काम आरंभ किया। सारे के सारे आश्रमवासी मिलकर चरखा कातते फिर इसी से मोटा खद्दर तैयार होता, जिसे सब आश्रमवासी पहनते थे। इस आश्रम में रहते हुए विनोबा ने अपने साथियों से बहुत कुछ सीखा भी साथ में उन्हें सिखाया भी। उन्होंने हर काम अपने हाथों से किया। उनके साथियों ने अपनी तीव्र बुद्धि को देखा। वहीं पर उन्होंने एक शिक्षक का कार्य आरम्भ किया। जब वे पढ़ते थे तो उनकी आवाज दूर-दूर तक गूँजती सुनाई देती थी।

विनोबा ने साबरमती आश्रम में रह बहुत कड़ा परिश्रम किया। आराम नाम की कोई चीज जैसे उनके पास रह ही नहीं गई थी। आश्रम में लगे पौधों को वे बाल्टियाँ भर-भरकर पानी ला कर सींचते थे। दिन-रात परिश्रम करने से वे काफी कमजोर हो गए थे। एक दिन गांधी जी ने उनसे पूछा—

"विनोबा, तुम इतनी मेहनत कैसे कर लेते हो? जबकि तुम्हारा शरीर इतना कमजोर है।"

"बापू! मुझे यह सब करने का बल शरीर से नहीं मन से मिलता है।"

विनोबा के इस उत्तर से गांधी जी बहुत खुश हुए थे।

कुछ ही समय पश्चात् आश्रम से गुजराती के शिक्षक छुट्टी पर

चले गए। अब आश्रमवासियों के सामने समस्या पैदा हो गई थी गुजराती पढ़ाने की।

यह काम भी विनोबा ने ही पूरा किया हालांकि गुजराती भाषा उन्होंने केवल इस आश्रम में आकर ही सीखी थी। परन्तु उन्हें अपनी प्रतिभा पर पूरा विश्वास था। यह कार्य उन्होंने पूरा कर दिखाया। गांधीजी विनोबा के इस कार्य से बहुत खुश हुए। महादेव देसाई ने इस विषय में लिखा है।

"गांधी जी एक दिन कहते थे कि विनोबा बहुत बड़ा आदमी है। महाराष्ट्रियों और मद्रासियों के बारे में मेरे अनुभव सदा अच्छे रहे हैं और इस विनोबा की तो बात ही और है। इसकी तो प्रशंसा ही नहीं की जा सकती।"

सन 1918 में बड़ौदा से उनकी माँ की बीमारी का समाचार मिला। गांधी जी ने उन्हें अपनी माँ की सेवा करने के लिए बड़ौदा भेजा, किन्तु यह उनकी अंतिम सेवा सिद्ध हुई। उनकी माँ सदा के लिए उनसे बिछड़ गई और वे केवल माँ की एक साड़ी और उनकी ही अन्नपूर्णा की एक मूर्ति यादगार के रूप में लेकर वापस आश्रम आ गए।

जब खादी लहर जोरों पर चली तो मिल की इस साड़ी को आश्रम को अर्पण कर दिया और अन्नपूर्णा की मूर्ति को प्रभुदास गांधी की माँ काशीवा को इस शर्त पर दे दिया कि इस मूर्ति के आगे हर रोज एक सौ सूर्य नमस्कार लगने चाहिए। जब तक प्रभु-दास गांधी की माँ जीवित रहीं तो वे अपना वायदा पूरा करती रहीं। उनकी मृत्यु के पश्चात् प्रभुदास जी के पास यह मूर्ति वापस आ गई। यह बात ध्यान रहे प्रभुदास गांधी विनोबा जी के शिष्य हैं।

इस प्रकार से विनोबा जी साबरमती आश्रम में दिन प्रतिदिन लोकप्रिय हो रहे थे। गाँधी जी उन्हें अपना सबसे अधिक विश्वास-

पात्र मानते थे। हर कठिन कार्य विनोबाजी को ही सौंपा जाता था। उनके जीवन में से जैसे आराम समाप्त हो गया था, नींद को भी उन्होंने कभी प्यार न किया।

यदि किसी चीज से प्यार किया तो वह था कर्तव्य।

कर्तव्य के पालन के लिए उन्होंने अपना आप ही मिटा डाला महान सपूत, भारत माँ की गोद में बहुत कम जन्म लेते हैं। इन सपूतों पर किसे गर्व न होगा ?

एक शिक्षक के रूप में इस आश्रम में उन्होंने महान कार्य किया। उसे युगों तक भुलाया नहीं जा सकेगा। उनका शिक्षक जीवन भारत के सारे शिक्षकों को एक नया मार्ग दर्शन दिखाता रहेगा।

इस महान तपस्वी इन्सान की जीवनगाथा लिखते समय मैं बार-बार यही सोच रहा हूँ कि काश भारत के सारे युवक विनायक की भाँति आदर्श बन जाएँ तो इस देश का सारा मानचित्र बदल जाएगा।

साबरमती आश्रम का जीवन बहुत कठोर था जिससे कारण कुछ विद्यार्थी बहुत ऊब गए उन्होंने प्रबन्धकों से कहा कि वे अपने घर वापस जाना चाहते हैं। उनकी यह इच्छा सुनकर प्रबन्धकों को बहुत चिंता हुई उन्होंने विनोबा जी को बुलाकर सारी स्थिति की जानकारी देकर इसका हल पूछा, विनोबा जी ने झट से कहा कि—

"यदि कुछ लोग आश्रम छोड़कर जाना चाहते हैं तो उन्हें जाने दीजिए। बहुत सारे ढीले-ढाले लोगों की अपेक्षा थोड़े से नियमपूर्वक रहने वाले लोग अधिक अच्छे हैं।"

इस घटना से आप अंदाजा लगा सकते हैं कि विनोबा जी कितने बड़े सिद्धांतवादी रहे हैं। नियमों का पालन करने में वे बहुत कठोर थे। यही बात जीवन भर उनके जीवन का अंग बनी रही। व्यक्ति से कहीं उनके ऊँचे सिद्धांत थे। उन्होंने सिद्धांतों और

नियमों के बारे में किसी प्रकार की ढील को पसंद नहीं किया।

नियमों के बारे में ही एक बार विनोबा जी के छोटे भाई बालकोबा का बुनाईशाला के प्रबंधक छोटे लाल से किसी बात पर झगड़ा हो गया। बात काफी बढ़ गई। छोटे लाल ने बालकोवा पर अनुशासनहीनता का आरोप लगाया।

इस पर बालकोवाजी अपने बड़े भाई विनोबा जी के पास पहुंचे और उनसे सारी बात कह सुनाई।

विनोबा ने बालकोवा की बात सुनकर कहा—

देखो भाई यह आश्रम है। यहाँ पर रहने वाले हर प्राणी का यही कर्तव्य है कि वे अपने से बड़े का कहना माने। छोटे लाल तुमसे बड़े हैं और अपने विभाग के प्रबन्धक भी। इसलिए तुम्हें उनकी बात माननी ही होगी।

बालकोवा को अपनी हार माननी पड़ी—

इस घटना से आप यह अंदाजा लगा सकते हैं कि विनोबा जी नियमों का किस कड़ाई से पालन करते थे। उन्होंने अपने भाई को भी ऐसा काम नहीं करने दिया जिससे अनुशासन भंग होता है।

एक नई लहर

देश के चारों ओर स्वतंत्रा संग्राम जोरों पर चल रहा था। भारत वासी आजादी चाहते थे और अंग्रेज आजादी देना नहीं चाहते थे। महात्मा गाँधी सारे देश में भ्रमण करके लोगों को इस आजादी की लड़ाई के लिए तैयार कर रहे थे। गाँधी जी चाहते थे कि विदेशी शासक शांति से आजादी दे दें।

किन्तु,

अंग्रेज तो इस विषय पर बात करने को ही तैयार नहीं थे। इस का परिणाम सब भारतवासियों के साथ-साथ विनोबा जी ने भी देखा जब पंजाब के जिला अमृतसर शहर में जलियाँ वाला बाग में बेगुनाहों को गोलियों से भून दिया गया। इस खूनी हादसे में सैकड़ों लोग मारे गए। हजारों जख्मी हो गए हजारों ही लूले लंगडे हो गए। विश्व इतिहास में ऐसी बात कहीं नजर नहीं आती थी जब इस प्रकार से शांतिवादी और बेगुनाहों पर उन्हें चारों ओर से घेर कर गोलियाँ चलाई गई हों जिससे उनके भागने के भी सारे रास्ते पहले से बंद कर दिए गए थे।

इस खूनी दुर्घटना का प्रभाव विनोबा जी के हृदय पर बहुत बुरा पड़ा उनकी आत्मा तड़पी हृदय खून के आँसू रोता रहा। इतना बड़ा अन्याय कौन सहन कर सकता था। इस खूनी इतिहास पर खून के आँसू बहाते हुए विनोबा बहुत दुःखी तो थे ही।

गाँधी जी असहयोग आन्दोलन शुरू करने जा रहे थे।

दूसरी ओर से यह सूचना मिली कि लोकमान्य तिलक जी बीमार हो गए हैं। जैसा कि पिछले पृष्ठों में मैं लिख चुका हूँ कि विनोबा जी तिलक जी के पुजारी थे। उनके मन में इनके लिए बहुत श्रद्धा थी। यही कारण था कि विनोबा जी तिलक जी के दर्शनों के लिए स्वयं बम्बई गये।

वहाँ पर जाकर भी उन्हें तिलक जी की मृत्यु का दुःख देखना पड़ा। एक श्रद्धालु भक्त की भाँति वे उस मृत्यु पर खूब रोए फिर आश्रम में वापस आए। इन्हीं दिनों आश्रम में उनके पुराने मित्र रघुनाथ श्रोधर घोत्रे, गोपाल राव काले, बाबा मोके और द्वारका नाथ हरकारे भी आश्रम में ही आ चुके थे। वे सब भी उन के साथ मिल कर काम कर रहे थे। जमना लाल बजाज चाहते थे कि वर्धा में भी ऐसा ही आश्रम खोला जाए। इस काम के लिए सभी मित्र मिलकर वर्धा भी गए।

तिलक जी की मृत्यु का दुःख विनोबा जी को बहुत हुआ था। वे हर समय उदास रहने लगे थे। अनमने मन से उन्होंने गांधी जी से कहा कि मैं अब एक वर्ष की छुट्टी पर जा रहा हूँ।

गांधी जी ने उन्हें रोका नहीं बल्कि खुशी-खुशी आराम करने के लिए कहा क्योंकि वे विनोबा के मन की व्यथा को अच्छी तरह समझ रहे थे।

इस छुट्टी में विनोबा छः मास तक "वाई" में रहे यह उनके पूर्वजनों का जिला है। यहाँ पर रहकर उन्होंने संस्कृत के प्रकांड पंडित नारायण शास्त्री मराठे से ब्रह्मसूत्र पर शंकराचार्य के भाष्य पर प्रवचन सुने। यहीं पर भागवद् गीता, उपनिषद्,पतंजलि के योग-सूत्र और मनुस्मृति का उन्होंने गहराई से अध्ययन किया। शेष छः मास वे आस-पास के गाँव में घूमते रहे। इस भ्रमण से उन्हें जनता की आर्थिक कठिनाइयों को समझने का मौका मिला, उन्होंने गाँव वासियों के दुःखों को देखा।

वास्तव में विनोबा जी के जीवन की यही पहली पद यात्रा थी। इससे उन्हें एक नई प्रेरणा मिली थी। उन्होंने मन में यह धारणा बना ली थी कि जब तक देश की जनता से सीधा सम्पर्क नहीं किया जाएगा। उस समय तक उनके दुःखों को नहीं जाना जा सकता। इस पद यात्रा में विनोबा जी ने गीता पर भाषण भी दिए। उनके यह प्रवचन धीरे-धीरे बहुत लोकप्रिय होने लगे। लोग दूर-दूर से उनके इन भाषणों को सुनने के लिए आने लगे। उनके प्रवचनों से लोग बहुत ही प्रभावित हुए। एक बार तो हिमालय से आपका एक संन्यासी ने यह प्रवचन सुनकर कहा कि कहीं जगत गुरु शंकराचार्य के प्रवचन तो नहीं सुन रहे ? अपने पचासवें भाषण के अंत में विनोबा ने कहा—

"मैं नहीं जानता कि गीता से बढ़कर पढ़ने लायक चीज क्या हो सकती है। फिर मुझे एक ऐसा पुरुष भी मिल गया है। जो

गीता के तत्त्व ज्ञान पर स्वयं अपने जीवन में अमल कर रहा है। यह मेरे गुरु हैं जो साबरमती आश्रम में रहते हैं।

यही नहीं विनोबा ने हर गाँव में स्वयं सेवकों को एक स्थान पर इकट्ठा करके देश सेवा की प्रेरणा दी। यहाँ तक उन युवकों को एक और मार्ग दिखाया जिसके द्वारा वे सब मिलकर हर गाँव में जाकर अनाज की पिसाई करते इनमें अधिकतर लोग हाई-स्कूल के विद्यार्थी थे। इस नाम से उन लोगों ने इतने पैसे इकट्ठे कर लिए कि उन्होंने अपनी लायब्रेरी के लिए कई सौ रुपये की पुस्तकें खरीद लीं। यह था एक नया रास्ता—जो आने वाली पीढ़ियों के भी काम आता रहेगा। अपने परिश्रम से अपना जीवन बनाओ।

बापू से बहुत समय तक दूर रहने के कारण विनोबा जी अपने जीवन में एक सूना पन-सा महसूस कर रहे थे। इस पर उन्होंने गांधी जी को एक पत्र लिखा जिसमें अपने बारे में सब बातें खोल कर लिख दीं। इस एक बीच उन्होंने जो भी काम थे वे सबके सब विस्तार से लिख दिए। जो इस प्रकार हैं—

परम पूज्य बापू जी

एक साल पूर्व मैं अस्वस्थ होने के कारण आपके आश्रम से दूर हो गया था। यह सोचा था कि हो तीन मास वाई रह कर वापस आश्रम लौट आऊँगा। पर एक वर्ष बीत रहा है फिर भी मेरा कोई ठिकाना नहीं। इसलिए आप सोचते होंगे कि मैं कहाँ हूँ जीवित भी हूँ अथवा नहीं ? यह शंका बनी होगी मैं समझता हूँ कि यह सारा दोष मेरा ही है। वैसे मैंने मामा फड़के को दो-चार पत्र लिख दिए थे मैंने उनसे यह बात स्पष्ट रूप से कह दी थी कि जब भी आप देश के लिए सत्याग्रह शुरू करें तो मैं आपके साथ ही हूँगा। हाँ मैंने आपको जो पत्र नहीं लिखा यह मेरी भूल है इस भूल का कारण मेरी पत्र न लिखने की आदत है। वैसे आप यह

बात याद रखें कि मैं आश्रम से कभी दूर नहीं हूँ। आश्रम मेरा जीवन है और मैं आश्रम का ही एक अंग हूँ।

यह बात भी आपको बताए बिना नहीं रहूँगा कि मैंने आश्रम से दूर रह कर भी जनता सेवा नहीं छोड़ी मैं गाँव-गाँव पद यात्रा कर रहा हूँ। इसमें मुझे लोगों को निकट से समझने का अच्छा अवसर मिला है। इन लोगों को मैं धर्म ज्ञान दे रहा हूँ ताकि इन में आत्मविश्वास पैदा हो सके। मैंने स्वयं वाई में आकर संस्कृत के महापंडित नारायण शास्त्री जी से बहुत कुछ सीखा है। आपको यह जानकर खुशी होगी कि मैंने इन ही दिनों।

(1) उपनिषद, (2) गीता, (3) ब्रह्मसूत्र और शंकरभाष्य। (4) मनुस्मृति (5) पातंजल योगदर्शन, इन सब ग्रंथों का मैंने नारायण पंडित के पास रह कर खूब अध्ययन किया है।

केवल यही नहीं मैंने अपनी सेहत के लिए हर रोज 10-12 मील (20 किलोमीटर के करीब) हर रोज पैदल चलना आरंभ किया। बाद में छः से आठ सेर तक अनाज पीसना चालू किया आज तीन सौ सूर्य नमस्कार और घूमना यह मेरा व्यायाम है। इस से मेरी सेहत काफी ठीक हो गई है।

आहार के विषय में पहले छः मास नमक खाया बाद में उसे छोड़ दिया। मसाले तो बिलकुल ही बंद कर दिए। दूध आरंभ कर दिया। बहुत प्रयोग करने के पश्चात् यह सिद्ध हुआ कि दूध के बिना बराबर चला नहीं जा सकता। फिर भी यदि इसे छोड़ा जा सकता है तो इसे भी छोड़ने की मेरी इच्छा है! एक मास तो मैंने केवल केला, नीबू और दूध पर ही व्यतीत किया।

इसके साथ ही धर्म ज्ञान का प्रचार भी जोरों पर रहा।

फिर राष्ट्र भाषा के प्रचार के लिए बड़ौदा में एक संस्था की स्थापना की।

मेरे जीवन का त्याग तो अब लम्बा होता जा रहा है, ब्रह्म-

चारी रहने की प्रतिज्ञा मैंने बचपन में ही कर ली थी, अब तो केवल उसका पालन कर रहा हूं।

सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य इन व्रतों का पालन मैंने अपनी जानकारी से ठीक ठाक ही किया है। ऐसा मेरा विश्वास है।

यह सत्याग्रह का या कोई दूसरा (शायद रेल सम्बन्धी सत्याग्रह करने का) कोई विचार हो तो मैं तुरन्त आपके पास पहुँच जाऊंगा।

इधर आश्रम में क्या हो रहा है, और कितने विद्यार्थी हैं, राष्ट्रीय शिक्षा की योजना क्या है। तथा मुझे अपने आहार में क्या-क्या परिवर्तन करने चाहिएं—? यह जानने की मेरी इच्छा है, आप स्वयं मुझे पत्र लिखें।

बस—

विनोबा के इस पत्र को पढ़कर गांधीजी बहुत ही खुश हुए और बोले कि यह तो पूरा भीम है भीम। "मछिंदर को मात करने वाला गोरखनाथ है।" और यह है गाँधीजी का उत्तर जो संक्षिप्त में यहाँ पर दे रहा हूं।

तुम्हारे लिए कौन सा विशेषण काम में लाऊं यह तो मुझे नहीं सूझता, तुम्हारा चरित्र मुझे मोह में डबो दे रहा है। तुम्हारी परीक्षा करने में मैं असमर्थ हूँ। तुमने जो अपनी परीक्षा दी है उसे मैं स्वीकार करता हूँ। और तुम्हारे लिए पिता का पद ग्रहण करता हूं, मेरे लोभ को तो लगभग तुमने पूरा ही किया है। मेरी मान्यता है कि सच्चा पिता अपने से विशेष चरित्रवान् पुत्र पैदा करता है। और सच्चा पुत्र वह है जो पिता ने जो कुछ किया है, उसमें वृद्धि करे। पिता सत्यवादी, दयामय, दृढ़ हो तो स्वयं अपने में यह गुण विशेष रूप से धारण करे। यह तुमने किया है, ऐसा मुझे दिखता है, तुमने यह मेरे प्रयत्नों से किया है। ऐसा मुझे नहीं मालूम होता, इसलिए जो तुमने पिता का पद दिया है, उसे मैं

तुम्हारी प्रेम की भेंट के रूप में स्वीकार करता हूं। और जब मैं हिरण्यकशिपु बनूं तो प्रहलाद भक्त के समान मेरा सादर निरादर करना।

तुम्हारी यह बात सही है कि तुमने बाहर रहकर भी आश्रम के नियमों का पालन किया है, तुम्हारे आश्रम में न आने के बारे में मुझे शंका ही नहीं, तुम्हारे सन्देश मुझे मामा (फड़के) ने पढ़ कर सुनाये थे, ईश्वर तुम्हें दीर्घायु करे और तुम्हारा उपयोग हिन्दी की उन्नति के लिए हो, यही मेरी कामना है।

रेल-विषयक सत्याग्रह की आवश्यकता अभी नहीं है, उसके लिये बुद्धिमान प्रचारकों की आवश्यकता है। खेड़ा जिले में शायद सत्याग्रह करना पड़े, अभी तो मैं रमता राम हूं, दो एक दिन में दिल्ली जाऊंगा।

विशेष तो जब तुम आओगे तब, सब तुमसे मिलने के उत्सुक हैं।

"बापू का आशीर्वाद"

बापू के इस पत्र को भावनाओं से आप इतना अन्दाजा तो लगा सकते हैं कि विनोबा जी से कितना प्यार करते थे बापू, यह प्यार तो स्वीकार करता था बाप बेटे का रिश्ता, जो बहुत कम लोगों को पता है, इस पत्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि गाँधीजी ने विनोबा को अपना पुत्र बनाना स्वीकार किया।

और फिर पूरे एक वर्ष के पश्चात्, विनोबा चुपचाप आश्रम में लौट आये थे। उसी प्रकार त्याग मूर्ती बाने, नंगा सिर, नंगे पाँव, जैसे ही गए थे, वैसे ही आ गए, गाँधीजी ने जैसे ही उन्हें देखा तो बहुत खुश हुए, विशेष रूप से समय की पाबन्दी, यह तो विनोबा जैसा कोई महान् आदर्शवादी ही कर सकता था, गाँधी जी उन्हें देखते ही बोले।

"इससे तुम्हारी सत्य निष्ठा प्रकट होती है।"

"यह तो मेरी गणित निष्ठा मात्र है।" विनोबा हंसकर बोले।

"और गणित क्या, कभी सत्य को छोड़ सकता है?"

गाँधीजी फिर जोर से हंसकर बोले।

विनोबा जी गाँधीजी का दिली प्यार पाकर बहुत खुश हुए थे, सच बात तो यह थी कि वह आश्रम से बाहर रहकर भी आश्रम के नियमों का पूरा पालन करते रहे।

आश्रम में रहते हुए ही विनोबा ने गाँधीजी के "मंगलप्रभात" का मराठी में अनुवाद किया और प्रस्तावना के रूप में साथ ही कुछ पद्य के रूप में साथ में कुछ पद्य भी लिखे हैं, अन्तिम पद्य में लिखा है—

अद्वितीय चि, एकत्व गुरु चे, गोरेवूनि जें,
विन्या शून्य विना—भूत फावला गणित परी।

गुरु का एकत्व अद्वितीय ही है जिसका गौरव कर विनाभूत पानी अलिप्ती एकाकी (और) शून्य विन्या, (भी) गणित के समान सफल बना है।

सन 1920 में भारतीय राष्ट्र महासभा, कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में, जमना लाल जी बजाज गाँधीजी के विशेष सम्पर्क में आये तो गाँधीजी उनकी सेवा, भाव, देश भक्ति और काम की लगन देखकर इतने खुश हुए थे कि उन्हें अपना पांचवां पुत्र बना लिया। जमनालाल की यह इच्छा थी कि वर्धा में भी साबरमती की भाँति ही एक आश्रम खोला जाये।

गाँधीजी ने उनके इस विचार को पसन्द किया, और फिर बोले कि आप जानते हैं कि मैं गुजराती हूं, इसलिए इस प्रदेश की अधिक सेवा कर सकता हूं, और गुजरात के द्वारा सारे देश की सेवा कर सकता हूं।

मगर, बजाज भी अपनी जिद्द पर अडिग रहे और उन्होंने गाँधीजी से वर्धा में आश्रम खोलने की मंजूरी ले ही ली। इस काय

के लिए रमणीक लाल मोदी को आश्रम की शाखा खोलने के लिए भेजा गया। किन्तु, रमणीक लाल जी को वहाँ की जलवायु रास न आई, इसीलिए वहीं से वापस आ गए, फिर बजाज जी के कहने पर विनोबा जी को, आश्रम का बोझ सम्भालने के लिए भेजने के लिए कहा गया। मगर इसका विरोध किया मग्न लाल जी गाँधी ने, वे विनोबा को किसी कीमत पर आश्रम से बाहर नहीं भेजना चाहते थे। क्योंकि वे जानते थे कि विनोबा के बिना साबरमती आश्रम अधूरा है।

मगर गाँधीजी की बात सबको माननी ही पड़ी और विनोबा को वर्धा अपने कुछ साथियों के साथ भेज दिया गया।

विनोबाजी, 6 अप्रैल को, साबरमती अपने साथियों : रघुनाथ राव घोत्रे, द्वारकानाथ हरकरि, बल्लभ स्वामी, उनके भाई भास्कर कीशी गाँधी, कृष्ण दास गाँधी, आदि को अपने साथ ले, वर्धा के लिए चल पड़े, और 8 अप्रैल, सन् 1921 को जैसे ही वर्धा पहुंचे, तो उन्होंने उस बगीचे को देखा, जो बजाज जी ने आश्रम के लिये चुना था, किन्तु विनोबा जी ने उस स्थान को देखकर कहा कि यहाँ पर सुबह के समय बहुत से लोग आते हैं, इस जगह पर आश्रम चलना कठिन है।

विनोबा जी की बात मानते हुए बजाज जी ने, तुरन्त अपना एक बंगला और उसके साथ वाली आठ एकड़ जमीन आश्रम के लिए दे दी जिसे अब बजाजवाड़ी कहते हैं।

कुछ दिनों के पश्चात् ही और बहुत से साथी भी इस आश्रम में आ गये जिनमें विनोबा जी के भाई बालकोवा भी थे। इस आश्रम के स्थान में बहुत से साँप बिच्छू निकलते थे, वैसे भी यह बंगला बहुत पुराना और आश्रम के योग्य नहीं था। इसलिए बजाज जी ने अपनी दूसरी आठ एकड़ जमीन पर नई इमारत बनाने का फैसला किया, जिसे आजकल महर्षि आश्रम कहा जाता

है ।

—सन् 1928 में आश्रम नई इमारत में आ गया—

अंग्रेज सरकार की नजर वैसे तो सभी क्रान्तिकारियों और देश भक्तों पर बराबर रहती थी, मगर, इन आश्रमों पर तो उन्हें कड़ी नजर रखनी पड़ती थी, उनका विचार था कि साबरमती और वर्धा से ही सबसे अधिक देश भक्त पैदा हो रहे हैं। तभी इस आश्रम का नाम सत्याग्रह आश्रम रखा गया।

सन् 1932 के आन्दोलन में अंग्रेज सरकार ने इसे जब्त कर लिया, और फिर वह इस रूप में कभी नहीं चला।

क्योंकि विनोबा जी जेल चले गए थे इसलिए इस आश्रम का संचालन कौन करता, करीब-करीब सभी देश भक्त जेलों में डाल दिये गये थे।

धुलियां जेल में

साहित्यिक रूप

साबर मती आश्रम और वर्धा आश्रम में केवल इतना ही अन्तर नजर आ रहा था कि, इस आश्रम के नियम कुछ अधिक कठोर हो गये थे। विनोबा जी ने, अपने साथियों को और अधिक परिश्रम करने के लिए कहा—जिसके फलस्वरूप सब साथी, अपने कार्यों में लग्न से जुटे रहे।

यहाँ पर मैं विनोबा जी का एक पत्र लिख रहा हूं।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह।
शरीर, श्रम, अस्वाद, सर्वत्र, भयवर्जन।

सर्वधर्म समानत्व, स्वदेशी, स्पर्श भावना ।
विनम्र, व्रतनिष्ठा, एकादश सेव्य हैं।

एकादश व्रत वाले यह दो पद, लगभग सभी आश्रमों में प्रार्थना के पश्चात् पढ़े जाते थे।

विनोबा जी, अपने साथियों को त्याग मार्ग पर ले जाना चाहते थे, वे उन्हें संसार के झूठे बन्धनों से मुक्त करना चाहते थे, ऐसा त्याग शायद ही इस संसार में कोई कर सके। उदाहरण के लिए मैं यह बता दूँ कि आश्रम में केवल एक ही अनाज या दाल भोजन के लिए पकती। उसके साथ और कुछ न होता, विनोबा का विचार था कि, अनाज, दालें, साग-सब्जी, एक साथ खाने से इन्सान के शरीर में सुस्ती पैदा होती है और इससे आध्यात्मिक विकास में बाधा पड़ती है।

मसाले तो पहले से ही बन्द कर दिये गये थे।

लगातार कई दिन तक नमक भी बन्द रहा।

विश्व के महा योद्धा नेपोलियन के शब्द अपने साथियों को सुनाते।

"आदमी चाहे कितना ही कम खाए, वह अधिक ही होता है।"

इस प्रकार खाने के मामले में विनोबा अपने साथियों को त्याग की ही सलाह देते थे। गाँधीजी भी वर्धा में आते रहते थे कुछ दिनों तक वहीं रुककर निरंतर अपने साथियों से विचार-विमर्श करते।

वर्धा में ही जमनालाल जी बजाज का बनवाया लक्ष्मीनारायण मन्दिर है जिसे 19 जुलाई, 1928 को वर्धा के गाँधी चौक में एक विशेष समारोह के साथ, विनोबा जी के हाथों, हरिजनों के लिए खोल दिया गया। सारे देश में यह पहला मन्दिर था जो गाँधीजी के विचारों की पूर्ति करते हुए हरिजनों के लिए खोला गया था।

विनोबा जी भी भली भाँति जानते थे कि यदि हम वास्तव में ही सब देश भक्त हैं तो हमें सबसे पहले यह भेदभाव मिटाना होगा, इस संसार में—कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नहीं, सबके सब इंसान बराबर हैं। घृणा से दूर रहना प्रेम प्रचार करना यही सच्ची मानवता है।

विनोबा जी, अपने आपको कभी भी अच्छा नहीं कहते थे और न ही किसी दूसरे के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर खुश होते थे—इसके लिए मैं आपको एक घटना सुनाता हूं।

एक बार गांधी जी ने अपने एक पत्र में यह शब्द लिखे कि—विनोबा तुम्हारे से बढ़कर महान आत्मा मुझे कभी नहीं मिली।

विनोबा जी ने जैसे ही यह पत्र पढ़ा तो क्रोध में आकर इसे फाड़कर फेंक दिया।

उस समय विनोबा जी के पास कमल नयन जी बजाज बैठे थे। उन्होंने आश्चर्य से उनकी ओर देखते हुए पूछा।

"हाय यह क्या ? आपने तो बापू के पत्र को फाड़ डाला।"

"बजाज जी क्या आप यह नहीं सोचते कि गांधी जी ने मुझे महान आत्मा कहकर बहुत बड़ी भूल की है। इससे तो हमारे दूसरे साथियों के साथ भी अन्याय होता है। जो मुझसे कहीं अधिक महान होंगे।"

"नहीं बापू को आदमियों की बहुत अच्छी पहचान है उनसे ऐसी भूल नहीं हो सकती।" कमल नयन बोले।

"खैर भले ही बापू ने यह लिखकर कोई भूल न की हो मगर मैं इसे संभाल कर क्यों रखूँ। इससे तो मुझे अहंकार हो जाएगा जो मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।"

विनोबा जी के इन शब्दों से आप यह तो अंदाजा लगा सकते हैं कि उन्हें किसी प्रकार की भी अपनी प्रशंसा पसंद न थी। वे तो केवल सेवा के लिए इस संसार में आए थे। सेवा उनका धर्म था।

इस सेवा के बदले में वे किसी से प्रशंसा नहीं चाहते थे।

"यह आदर्श आज के युग के लोगों को सीखना चाहिए।"

आज के युवा वर्ग को इस महान इन्सान की शिक्षा को ग्रहण करना होगा। ऐसे त्यागी और तपस्वी व्यक्ति युगों के पश्चात् ही जन्म लेते हैं। जो इस संसार में ऐसी अमिट यादें छोड़ जाते हैं, जिनका प्रकाश सदा ही मार्ग-दर्शन देता है।

आज भारत की युवा पीढ़ी बुरी तरह भटक रही है। ऐसे समय में हमें विनोबाजी के जीवन को उनके सामने रखना होगा। इस महान युवक ने जो त्याग किया, उसकी मिसाल विश्व इतिहास में कहीं नहीं मिलती। इसके त्याग की एक कहानी और सुनाता हूँ।

एक बार बाबा जी को यह शौक पैदा हुआ कि वहां साबर-मती में पंडित खरे से संगीत सीखेंगे। उन्होंने विनोबा जी के सामने यह इच्छा प्रकट की तो विनोबा ने कहा—

"देखो भाई देश इस समय संकट में है। आपको यहीं पर रहना चाहिए।"

किन्तु बाबा जी को विनोबा जी की बात पर संतोष नहीं हुआ उन्होंने दुबारा यह बात कही तो विनोबा ने फिर खुलकर कहा—

"देखो मातृभूमि की बेदी पर हमें अपनी प्यारी से प्यारी अभि-लाषाओं को त्यागने के लिए तैयार रहना चाहिए। क्या आपको ऐसा नहीं लगता।"

बाबाजी के मन को बात लग गई। उन्होंने देश के लिए अपनी इस इच्छा को कुचल डाला।

यह काम उन्होंने किसी के दबाव में आकर नहीं किया था। बस विनोबा जी की शिक्षा का ही असर था।

संपादक के रूप में

महाराष्ट्र धर्म मासिक का सम्पादन कार्य स्वयं विनोबा जी ने संभाला। जनवरी सन 1923 में इसका पहला अंक प्रकाशित हुआ। विविध विषयों के 48 पृष्ठों के इस पत्र में सारे लेख विनोबा के ही होते थे।

झंडा सत्याग्रह में जब विनोबा गिरफ्तार हुए तो इस पत्रिका को बंद करना पड़ा। किन्तु उनके जेल से वापस आने पर इसे दुबारा शुरू कर दिया गया। लेकिन इस बार इसे मासिक से सप्ताहिक बना दिया गया था। इससे यह लाभ हुआ कि विनोबा जी के विचार जल्दी-जल्दी लोगों तक पहुँचने लगे।

इस पत्रिका में विनोबा जी ने अपने लेखों का एक नया सिल-सिला 'मधुकर' के शीर्षक से आरंभ किया। वैसे आजकल यह निबन्ध-संग्रह मधुकर के नाम से ही सर्व सेवा संघ ने पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर दिया है। इस संग्रह को पढ़कर पाठक वर्ग यह सोच सकता है कि उनका मस्तिष्क कितना तेजी से काम करता है। उसकी एक मिसाल मैं आपको यहाँ पर देता हूँ। विनोबा जी अपने एक लेख में इस प्रकार लिखते हैं—

बूढ़े का अर्थ यह नहीं कि जिसकी उम्र अधिक हो जाए। बल्कि बूढ़ा वह है जिसके विचार बूढ़े हो जाएँ जिसे नई बातें सीखने का शौक हो ऐसे बूढ़े सभी पेशों—शिक्षकों में भी मिल सकते हैं।

एक अन्य लेख में, दाँत के बदले दाँत, आँख के बदले आँख, वाली दलील का खंडन करते हुए वे लिखते हैं—

हम तलवार का मुकाबला तलवार से नहीं ढाल से करते हैं। हमारी ढाल उसके मुकाबले मजबूत होनी चाहिए।

इसी प्रकार हिंसा का मुकाबला हमें हिंसा से नहीं बल्कि प्रेम

और करुणा के द्वार से करना चाहिए ।

तीन गृह देवता लेख में वे लिखते हैं,'चूल्हा चक्की और चरखे' की विशेषता क्या है? तीनों के नाम च कवर से शुरू होते हैं। तीनों ही गृहस्थ की कई जरूरतों को पूरा करते हैं।

एक अन्य लेख में उन्होंने ग्राम वासियों के बारे में लिखा ग्राम क्षेत्र की सेवा अच्छी तरह करने के लिए कार्यकर्ताओं को गाँव में ही जाकर रहना चाहिए। केवल कभी-कभी उनके पास जाकर उनकी कठिनाइयों को दूर नहीं किया जा सकता। रचनात्मक कार्य कर्ताओं को उपकार की भावना से ग्राम सेवा का काम नहीं करना चाहिए। सच्चा कार्यकर्त्ता तो अपने आप को गाँव वालों में से ही एक बना लेता है। वहीं रहता है, वहीं उनके साथ रहता है।

झंडा सत्याग्रह

13 अप्रैल 1923 को कांग्रेस का झंडा सत्याग्रह आरंभ हो गया था। शुरू में तो विनोबाजी इस सत्याग्रह में शामिल नहीं हुए क्यों-कि आश्रम के कामों से उन्हें फुर्सत नहीं मिल पाती थी। परन्तु घटनाओं ने कुछ ऐसा मोड़ लिया कि उन्हें आश्रम का काम छोड़ कर अपने साथियों के साथ इस सत्याग्रह में शामिल होना ही पड़ा। हालांकि 1921 के असहयोग आन्दोलन में उन्होंने भाग नहीं लिया था। उन दिनों वे गाँव-गाँव जाकर अपने रचनात्मक कार्य करते रहे।

मगर इस बार तो हालत कुछ इस प्रकार से बदली कि विनोबा को सत्याग्रह में कूदना ही पड़ा। अंग्रेज सरकार पूरी तरह से चौकस थी। उन्होंने और नेताओं की भाँति विनोबा जी

को भी गिरफ्तार करके नागपुर जेल भेज दिया । इस जेल में ही उनके सारे आश्रम के साथी थे । बस फिर क्या था, विनोबा जी ने जेल में ही अपना आश्रम खोल दिया । उन्होंने तो यह महसूस ही नहीं किया कि वे जेल में हैं या आश्रम में, इस महान तपस्वी के लिए जेल और आश्रम में क्या अन्तर हो सकता था । विनोबा की यही बातें देखकर महादेव भाई ने लिखा है—

विनोबा के पास कुछ बातें ऐसी हैं जो दूसरों के पास नहीं उनका प्रथम श्रेणी का एक गुण यह है कि वे जो भी निर्णय करते हैं । उस पर उसी समय अमल करते हैं । उनका दूसरा गुण है सतत विकास शीलता बापू के पश्चात् केवल मैंने विनोबा में ही यह गुण देखे हैं ।

1924 गाँधी जी ने विनोबा को दक्षिण भारत में वायकोम में चलाए जा रहे सत्याग्रह का संचालन करने के लिए भेजा । अंग्रेज सरकार के विरुद्ध दक्षिण भारत में यह सबसे बड़ा सत्याग्रह था । पुलिस के जुलमों के विरुद्ध अहिंसा का मार्ग अपना विनोबा जी इस सत्याग्रह का संचालन करते रहे इसे देखने के लिए स्वयं गाँधी जी वहाँ आए । इस सत्याग्रह के बारे में सारे देश के समाचार पत्रों में खुलकर लिखा गया । यह सत्याग्रह एक वर्ष और चार मास तक चला । इससे ही सारे देश में विनोबा जी का नाम जाना गया ।

जैसे ही विनोबा अपने आश्रम वर्धा में वापस आए तो उनके मन ने नई आशाएँ थीं । उन्होंने एक साल चार मास से सत्याग्रह में बहुत कुछ सीखा था । उनके मन में त्याग की एक नई भावना पैदा हुई इसका ही यह परिणाम था कि सन 1930 से 1934 तक उन्होंने दूध पीना बंद कर दिया था । शायद वे वह यह देखना चाहते थे कि इन्सान दूध के बिना भी जी सकता है कि नहीं सच तो यह कि उन्हें नए-नए परीक्षण करने में आनन्द आता था ।

सन 1924 में गाँधी जी ने कौमी एकता के लिए जब इक्कीस

दिन का उपवास दिल्ली में आरंभ किया तो उन्हें केवल विनोबा ही एक मात्र साथी नज़र आए जो उनका साथ दे सकते थे। इसलिए विनोबा जी को वर्धा से दिल्ली बुलाया गया। यहीं पर रह कर उन्होंने गाँधी जी का पूरा-पूरा साथ दिया। उपवास समाप्त होते ही विनोबा जी वापस वर्धा आ गए और फिर से आश्रम के कामों में लग गए।

अपने आश्रम वासियों को वे सदा मिलकर प्रेम भावना से कार्य करने की सलाह देते थे। इसके लिए वह बौद्धों के तीन मंत्र याद अक्सर करते—

बुद्धं शरणं गच्छामि
सघं शरणं गच्छामि
धम्मं शरणं गच्छामि

सन 1930 में गाँधी जी ने डांडी मार्च आरंभ किया तो इससे सारे देश में एक नई लहर दौड़ गई। विनोबा जी ने अपने साथियों को साथ लेकर ताड़ी (देसी प्रकार की शराब) के विरुद्ध आंदोलन आरंभ कर दिया। उन्होंने लोगों से कहा कि शराब सबसे भयंकर जहर है। यही सोचकर उन्होंने जंगलों में जा-जाकर ताड़ी पैदा करने वाले वृक्षों को काटना आरंभ कर दिया था। जिसके फल-स्वरूप 2000, पेड़ काट डाले गए। यही था जंगल सत्याग्रह जिस में विनोबा के कुछ साथी पकड़े भी गए थे।

इन दिनों ही विनोबा ने गीता का पद्यानुवाद करना आरम्भ किया। यह काम आरंभ हुआ था 7 अक्तूबर 1930 को और पहली पांडुलिपि को 6 फरवरी को समाप्त किया। इन चार महीनों में विनोबा अनुवाद का काम भी करते रहते और साथ ही अपने विद्यार्थियों को भी पढ़-पढ़कर सुनाते रहते गीता के श्लोकों के बारे में उनसे राय भी पूछते रहते अनुवाद का काम (गीता +आई) गीत माता रखा गया। यह सारा काम उन्होंने अपनी

माँ की इच्छा से किया था—यह सारा काम सन् 1932 में धुलिया जेल में ही पूरा हुआ गतई में सफलता का अंदाजा तो आप इस बात से ही लगा सकते हैं कि स्वयं गाँधी जी अपनी प्रार्थना सभाओं में पढ़ कर सुनाया करते थे। गतई का हिंदी अनुवाद सियाराम गुप्त ने और गुजराती में किशोरी लाल मशरूवाला ने किया किन्तु विनोबा जी का मराठी अनुवाद ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

गतई की सफलता का आप इससे भी अंदाजा लगा सकते हैं कि कुछ ही समय में महाराष्ट्र में इसकी एक लाख प्रतियाँ बिक गईं।

सारे देश में स्वतंत्रता आन्दोलन पूरे जोरों पर चल रहा था उन्हीं दिनों धुलिया की एक विराट सभा में विनोबा जी ने जनता को संबोधित करते हुए कहा कि—

आजादी प्राप्त करने के लिए हमें बड़े से बड़ा त्याग करना चाहिए इसके लिए हमें किसी के प्राण नहीं लेने बल्कि अपने प्राण देने के लिए तैयार रहना है। आजाद तो हम होकर ही रहेंगे आज हमने जो झंडा यहाँ पर फहराया है वह आजाद भारत अवश्य फहराएगा।

धुलिया में उनके भाषणों का बहुत प्रभाव पड़ा चारों ओर जनता ने आजादी की आवाज बुलंद की अंग्रेज सरकार विनोबा के भाषणों से बहुत चिंतित हुई। जैसे ही धुलिया से विनोबा जी गाँव पहुँचे तो वहाँ पहुँचते ही उनकी सभाओं पर पाबंदी लगा दी गई। किन्तु विनोबा ने एक जन सभा में अपना भाषण आरंभ किया—

उसी समय पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया।

इस प्रकार से उन्हें छः मास की सजा हुई और धुलिया जेल में भेज दिया गया। इस जेल में उन्होंने अपने हाथों से चक्की पीसी क्योंकि अंग्रेज सरकार सभी देश भक्तों को कठोर से कठोर दंड

ना चाहती थी इसी बीच विनोबा जी की सेहत भी काफी गिर
ई उनके साथियों ने उन्हें चक्की पीसने से बहुत मना किया
किन्तु वे नहीं माने।

जेल में उपवास

धुलिया जेल में देश भक्त कैदियों पर अत्याचार तो बहुत होते ही थे। इसके साथ-साथ उन्हें जीवन का कोई सुख नहीं मिलता था। जेल के सत्याग्रही कैदियों ने भूख हड़ताल आरम्भ कर दी। विनोबा जी भी अपने साथियों के साथ इस भूख हड़ताल में शामिल हो गए।

जेल के कर्मचारियों में भगदड़ मच गई। उन्होंने सत्याग्रही कैदियों की बहुत-सी मांगें पूरी करने का आश्वासन दिया जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपनी भूख हड़ताल तो समाप्त कर दी मगर विनोबा जी ने कहा कि जब तक हमारी सारी मांगे पूरी तरह से मानी नहीं जाती तब तक मैं भूख हड़ताल समाप्त नहीं करूँगा।

फिर क्या था जेल अधिकारियों को विनोबा के आगे झुकना पड़ा। उन्होंने सारी माँगे पूरी करने का वचन दिया तो विनोबा जी ने अपनी भूख हड़ताल समाप्त कर दी।

धुलिया जेल के इतिहास में विनोबा जी के गीता प्रवचन सदा ही सुनहरी अक्षरों में लिखे जाएँगे। उन्होंने सभी कैदियों को हर रोज इकट्ठे करके गीता के प्रवचन सुनाने आरंभ किए जो जेल जीवन में एक नई क्रांति कही जा सकती है। इन प्रवचनों को 22 फरवरी को आरंभ किया गया और 19 जून को समाप्त किया गया।

विनोबा जी के गीता प्रवचन पुस्तक के रूप में बहुत लोकप्रिय हुए। इन्हें बाद में देश की अन्य कई भाषाओं में अनुवाद करके प्रकाशित किया गया। देशी भाषाओं के साथ-साथ विदेशी भाषाओं में भी इस पुस्तक का प्रकाशन हुआ। हर भाषा में ही यह पुस्तक बहुत लोकप्रिय हुई।

पदयात्रा और शिक्षा का प्रचार

धुलिया जेल से जैसे ही विनोबा जी वापस आए तो वर्धा का आश्रम विदेशी सरकार ने बंद कर दिया था। अब उन्होंने अपने लिए एक नया मार्ग चुना, वह था गाँव वासियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने का क्योंकि वे जानते थे हमारे देश के गाँववासी सब से अधिक पिछड़े हुए हैं।

नालबाड़ी गाँव में ही ग्राम सेवक मंडल की स्थापना की। यह गाँव वर्धा से ड़ेढ़ मील की ही दूरी पर है। इसकी अधिकतर आबादी हरिजन और बिना जमीन के लोगों की थी जो करीब 800 की संख्या में थे। इन गरीब और दुःखी लोगों के जीवन की जैसे हर चीज़ अधूरी थी। यह बेचारे अपनी छोटी से छोटी इच्छा पूरी करने से वंचित थे।

यहाँ पर विनोबा जी ने अपने रहने के लिए बांस की कुटिया बनवाई। बस उसी कुटिया में उनका कार्य चलने लगा। उन्होंने वहीं से एक पत्र गाँधी जी को लिखा जिसमें नालबाड़ी के [illegible] सब कुछ विस्तार से लिखा।

गाँधीजी विनोबा के पत्र से इसलिए बहुत खुश हुए कि उन्होंने अपने लिए एक ऐसा रास्ता चुन लिया था जिसकी देश की जनता

को बहुत जरूरत थी खासकर पिछड़े वर्ग के लाग बड़ वर्ग के लोगों की घृणा का शिकार हो रहे थे। यह नफरत की दीवारें गिराने का सबसे अच्छा रास्ता था। तभी तो गाँधी जी ने खुश होकर विनोबा को अपना आशीर्वाद भेजा था।

गाँव के गरीब और बेरोजगार लोगों के लिए विनोबा ने यहाँ पर चरखे की कताई का काम शुरू करवाया। जिससे गरीब लोगों को अपने खर्चे के लिए करीब (दो आने) उस समय का सिक्का था। जिसके अंदर गरीब परिवार रोटी खा सकता था। उन्हें मिल जाते यहीं पर विनोबा ने चरखे के स्थान पर तकली पर कताई का नया परीक्षण आरंभ किया। इसके बारे में उन्होंने गाँधी जी को भी लिखा गाँधी जी यह सुनकर बहुत रान हुए हैंकि तकली पर चरखे से अधिक सूत की कताई होती है। फिर गाँधी जी ने स्वयं इस बात का परीक्षण किया वास्तव में ही विनोबा इस परीक्षण में बाज़ी मार गए थे।

यहीं पर विनोबा जी ने अपनी ऐतिहासिक पद यात्रा का कार्य क्रम आरंभ किया। इसके लिए उन्होंने अपने कार्यकर्त्ताओं के लिए एक व्यापक योजना बनाई। जिसके अंतर्गत हर कार्यकर्त्ता 12 गाँव ले और हर पंद्रह दिन में इनकी पद यात्रा करे और हर गाँव में जाकर वहाँ के लोगों के दु:ख-सुख देखें उनकी शिक्षा का प्रबंध करें। ऐसा करने से सारे जिले की जनता के बारे में उन्हें पूरा ज्ञान प्राप्त हो गया था।

लगभग दो वर्ष तक नालबाड़ी में रहने के पश्चात् यह सभी कार्यकर्त्ता अपनी-अपनी पसंद के गाँव में जाकर रहने लगे और वहीं पर कार्य करने लगे थे। प्रत्येक स्वयं सेवक ने गाँव में जाकर अपना एक आश्रम बना लिया था। इस प्रकार से विनोबा जी इन गाँव वासियों के दु:खों को दूर करने में लग गए।

विनोबा जी और उनके साथियों के परिश्रम का ही यह फल

था कि सदियों से खड़ी घृणा की दीवारों को गिराने के लिए उन्होंने हरिजनों के लिए 43 मंदिरों के द्वार और 300 कुएँ खोल दिए। ऐसा कार्य करके ग्राम सेवा मंडल के लोगों ने गरीबों के दिल जीत लिए थे। यह खामोश कार्य था निस्वार्थ सेवा···

अपने कार्यकर्त्ताओं के लिए विनोबाजी ने एक मराठी मासिक आश्रम वृत्त भी प्रकाशित किया। जिससे सब लोगों को एक दूसरे के बारे में जानकारी प्राप्त होती रहती। इसके साथ ही विनोबाजी गाँधी और जमनालाल बजाजजी भी अपने कार्यों के बारे में खुल कर लिखते रहते।

विनोबा जी ने अपने एक पत्र में गाँधी जी को लिखा था कि मुझे केवल दो बातों से ही आत्म शांति मिलती है।

1. "भगवान् का नाम लेने से।"

2. "दिन भर चरखा कातने से।"

वास्तव में सत्य बात तो यह है कि विनोबा के मन में तकला बस चुकी थी तकली के बिना तो वे अपने आप को अधूरा ही समझते थे। इसी विषय में उन्होंने राधाकृष्ण बजाज जी को एक पत्र में लिखा—

मेरे दिमाग में तो तकली बस गई है। मैं अभी अपने बचपन में हूँ। बच्चे को जैसे छोटी-सी कटोरी, छोटी सी थाली, छोटी-सी रोटी और छोटा सा लड्डू पसंद होता है, गीता भी मुझे छोटी सी मिल गई है। तकली भी वैसी ही है। इसी प्रकार से मुझे धुनरवी और चरखा चाहिए। तुकाराम ने भगवान् से प्रार्थना की है।

भगवान् "पहले संत तुम्हारा ध्यान करते थे, उनके लिए तुम —कैसे छोटे बने थे—वैसे ही मेरे लिए छोटे बनो।"

जमनालाल जी ने विनोबा को यह सुझाव दिया कि आपगतई का नवीन संस्करण संशोधन करके प्रकाशित करें। जमनालाल बजाज जी की बात को विनोबा कैसे टाल सकते थे। उन्होंने इस

काम के लिए भी समय निकाला, फिर गतई के नवीन संस्करण ग्राम सेवा मंडल की ओर से प्रकाशित हुए।

विनोबा जी के विचार जानने के लिए उनके एक और पत्र के कुछ अंश पेश कर रहा हूँ।

"जब तक बुद्धिमान लोग स्वयं अपनी इच्छा से शरीर श्रम नहीं करने लगेंगे तब तक रचनात्मक कार्यों में हम प्रगति नहीं कर सकेंगे।"

सन् 1937 में श्री गोपाल राव वालुजकट की देखभाल में नालबाड़ी में एक चमलिय भी खोला गया। इसमें अपनी मौत मरे जानवरों के चमड़े से जूते, चप्पलें तैयार होने लगीं। ऐसा करने से बहुत से देहाती लोगों को काम भी मिला और उनको पहनने के लिए जूते भी मिलने लगे।

गो धन के प्रयोग की दृष्टि से आश्रम में एक गोशाला भी खोल दी गई। इससे गो रक्षा के साथ-साथ अच्छी नसल की गाएँ भी तैयार होने लगीं साथ ही गरीब लोगों को कम लागत से दूध भी पीने को मिलने लगा।

धीरे-धीरे यह आश्रम गाँव वासियों के लिए स्वर्ग बनने लगा था। उनकी हर जरूरत को पूरा किया जाने लगा। यहां तक कि श्री मनोहर दिवाण जी इसी आश्रम में काम करते थे। उन्होंने कुष्ठ रोगियों के लिए एक अस्पताल भी खोल दिया। मनोहर जी ने नालबाड़ी से दो मील की दूरी पर दत्तपुर सन् 1936 में महा रोगी सेवा मंडल की स्थापना की और करीब 25 वर्ष तक इस संस्थान का संचालन करते रहे। आज भारत में कुष्ठ रोगों के इलाज का यह बहुत अच्छा संस्थान गिना जाता है। मजे की बात यह है कि यहीं पर कुष्ठ रोगियों की एक पूरी बस्ती है। जिसमें रहते हुए यह लोग अपने इलाज के साथ-साथ काम भी करते हैं। रोगियों को भी काम की प्रेरणा देना विनोबा जी का ही काम हो

सकता है।

अब विनोबा जी ने अपने पुराने आश्रम में जाकर इन्हीं गाँव वासियों के ग्राम सेवा मंडल की स्थापना कर डाली थी जिसके कार्यकर्त्ता इस क्षेत्र में चारों ओर फैल कर इन लोगों के लिए शिक्षा के साथ-साथ काम की योजनाएं भी बना रहे थे।

यही नहीं लड़कियों की शिक्षा के लिए अलग से एक कन्या-शाला खोल दो गई थी। यह लड़कियों का पहला शिक्षा संस्थान था। यहाँ पर देश के अन्य भागों से भी लड़कियाँ पढ़ने आतीं उनके रहने के लिए छात्रावास भी बनाया गया था।

विनोबा जी के इन महान कार्यों की चर्चा सारे देश में होने लगी थी। इसीलिए देश के बड़े-बड़े नेता इस महान आदर्शवादी इन्सान के क्रांतिकारी कामों को देखने के लिए स्वयं यहाँ पर आने लगे थे।

ऐसे ही इस क्षेत्र में लड़कों के हाई स्कूल की स्थापना भी की गई—इसकी स्थापना जमना लाल जी बजाज और जाजू के हाथों से हुई थी। जो विनोबा के निकटतम साथियों में से थे। इसे मार-बाड़ी विद्यालय कहा जाता था। सन् 1920 की नागपुर कांग्रेस के पश्चात् इसका नाम विद्या मंदिर रख दिया गया था।

किन्तु सन् 1930 के नमक सत्याग्रह के समय इस संस्थान को मजबूर होकर बंद कर देना पड़ा। उसका कारण था शिक्षकों और प्रबंधकों का जेल चले जाना।

विनोबा जी ने इस क्षेत्र के लोगों में जो जागृति पैदा की उसे इतिहास कभी भूल नहीं सकेगा। यह उनमें परिश्रम और तपस्या का ही फल था कि इस पिछड़े क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार होने लगा, लोग सदियों के अँधेरे से प्रकाश में आने लगे थे। इसके साथ-साथ खादी यात्रा और ग्राम सेवा मंडल की स्थापना से लोगों को बीमारी के भंयकर चंगुल से छुटकारा दिलाया।

यह सब प्रेरणा मिली थी इस महान संत से। जिसे विनोबा के नाम से याद किया जाता है। उन्होंने वहाँ के सारे कार्यकर्त्ताओं का मन अपने व्यवहार से जीत लिया था, कार्यकर्त्ताओं की प्रेरणा का सबसे बड़ा कारण तो था इस महातपस्वी इन्सान का अपना त्याग और कार्य। जो निरन्तर आठ-आठ घंटे तक चरखे पर सूत कातते रहते, कभी थकान नहीं महसूस की, सूत कातने के पश्चात् लिखने का कार्य करते, फिर अपने कार्यकर्त्ताओं के दिन भर के काम का लेखा जोखा करते, अपने एक पत्र में वे लिखते हैं।,

थोड़े से व्यक्तियों की अगर हम, पूरी-पूरी सेवा कर सकें, तो इसका गाँव में सम्पूर्ण जनता पर प्रकट असर देखा जा सकता है। इसलिए मैंने एक नया सूत्र चलाया है।

"सेवा व्यक्ति की और भक्ति समष्टि की"

"अर्थात् सेवा तो इन्सान की करनी चाहिए, और भक्ति समाज की"

देखा जाए तो विनोबा जी के सारे जीवन की नींव ही धर्म शिक्षा पर रखी थी। जो बचपन से उन्हें अपनी माँ की प्रेरणा से मिली, वे अपने विद्यार्थियों को भी यही धर्म शिक्षा देते थे, और साथ ही अपनी पुस्तकों का लेखन कार्य करते थे, यह पुस्तक धर्म ज्ञान के विषय पर ही लिखी गई थी।

कृतयोगी

जी, विनोबा को अपना बेटा भी मानते थे और भाई

साथियों को लिखे पत्रों में खूब खुल

कर विनोबा की प्रशंसा की, देश के जिस भाग में गाँधी जी जाते वहीं पर वे विनोबा का उदाहरण देते थे।

19 सितम्बर 1932 को यरवदा जेल से गाँधीजी ने विनोबा को लिखित एक पत्र में स्पष्ट रूप से लिखा।

"कृत योगी विनोबा"

इन शब्दों से संबोधित किया था गाँधी जी ने, इन शब्दों का प्रयोग इसलिए किया गया था कि विनोबा भगवान की सेवा में निःस्वार्थ लगे हुए थे। पाठकों की जानकारी के लिए मैं गाँधी जी का पूरा पत्र उनके सामने रख रहा हूँ।

यरवदा मंदिर

कृतयोगी विनोबा, 19 सितम्बर 1932

तुम्हारे कृत योग का द्वेष करने का कोई कारण नहीं। क्योंकि हमारे पास कृतयोगी सरदार हैं। इसीलिए तुम कम से कम एक मुट्ठी तो बढ़े ही ना।

तुम्हें तो पता है कि सरदार तो लम्बे समय तक चलते ही रहते हैं। उनका बस चले तो दाएँगे भी चलते-चलते और कतिंगे भी चलते-चलते, वृद्धावस्था में चलते-चलते याद करते ही हैं, उपचार के लिए उन्हें तुम्हारे पास भेजना चाहिए। और तुम्हारे हाथ में एक बैंत रखनी चाहिए, किन्तु तुम्हें यह अवसर मिलेगा तब ?

तुम गरीबों को ठीक फुसलाते हो मेरे जैसा गरीब जब तुम्हारे पत्र की झंखना करता है, तब उसे लिखा ही नहीं, और जब मृत्यु शैय्या पर सोने की तैयारी करता है, तब उसे लिखा : अब आरम्भ

किया है तो— नियमित लिखूँगा। किन्तु देव जाने : कृतयोगी की प्रतिज्ञा कभी झूठी होती नहीं सुनी, इसलिए प्रतिज्ञा के पालन के लिए भी मुझे उस शय्या से उठना ही तो अच्छा है। तो तुम्हारे पत्र नियमित रूप से प्राप्त करने की आशा रखूंगा।

इस तरह मजाक करके गम्भीर पत्र लिख रहा हूँ, मन खींचा और साथ-साथ यह भी सूचित किया कि तुम्हारे नाम के बारे में कहीं आलोचना करने जैसा नहीं पड़ता, यदि अग्नि परीक्षा से ही देह और जीव दोनों बच निकलेंगे तो कुछ लिखने जैसा होगा तो लिखूँगा। तुम्हारा पत्र संभाल कर रखता हूँ।

बापू के आशीर्वाद

यह था पत्र गाँधी जी का जिसमें उन्होंने विनोबा जी को कृतयोगी बनाया, और साथ ही वे गाँधी जी के सबसे प्रिय भी बन गए।

काम अधिक करना, और खाने के नाम पर केवल नाममात्र लेना विशेष रूप से पोषक तत्वों की कमी से विनोबा की सेहत बहुत ही कमजोर होने लगी थी। इन दिनों गाँधी जी भी वर्धा से, सेवा-ग्राम आश्रम में आकर रहने लगे थे। उनसे और जमनालाल बजाज से विनोबा का गिरता हुआ स्वास्थ्य न देखा गया। उन्होंने ही विनोबा को यह सलाह दी कि वे किसी पहाड़ी स्थान पर जाकर स्वास्थ्य लाभ करें।

बापू की बात मान विनोबा पनवार चले गए, नागपुर रोड पर वर्धा से छः मील दूरी पर यह एक गाँव है। जमनालाल जी न नदी के किनारे यहीं पर एक बंगला बनवा रखा था। बस यही स्थान

विनोबा जी को पसंद आ गया और उन्होंने बापू से कहलवा भजा कि मैं अब यहीं पर रहूँगा ।

यह तो भाग्य ने विनोबा के साथ ही लिख दिया था कि वे जहाँ पर जाएँगे वहीं पर एक आश्रम बनता चला जाएगा । और यही हुआ पनवार में, यहाँ पर विनोबा विश्राम के लिए आए थे किन्तु यहीं पर एक आश्रम बन गया । यह ऐतिहासिक स्थान आज तो विनोबा जी के कारण बहुत ही प्रसिद्ध और लोकप्रिय हो चुका है । इसी आश्रम में रहते हुए विनोबा ने अपनी गिरती हुई सेहत को बहुत हद तक संभाल लिया था । वे अपना अधिक समय गुजराती संतों के भजन गाने में व्यतीत करते, और दूर तक खेतों में घूमने निकल जाते ।

इसी आश्रम में रहकर, मुसलमानों की पवित्र धार्मिक पुस्तक "कुरानपाक" को अरबी से पढ़ने के लिए एक मौलवी का सहारा लिया । उन्हें कुरान शरीफ इस कदर पसंद आया कि कुछ ही वर्षों के पश्चात् उन्होंने स्वयं इस पुस्तक के कुछ भागों को हिन्दी में "कुरान सार" के नाम से तैयार किया । जिसे "सर्वसेवा संघ" द्वारा पहले हिन्दी में फिर उर्दू और अंग्रेजी में भी प्रकाशित किया गया । इस पुस्तक से भारतीय जनता को इस्लाम धर्म के बारे में बहुत ज्ञान प्राप्त हुआ और साथ ही इस्लाम धर्म के बारे में फैली बहुत सी गलतफहमियाँ दूर हो गई थीं ।

भरत-राम मन्दिर की स्थापना

यह बात तो प्रसिद्ध है कि जब श्री राम बनवास को गए तो उनकी गैरहाजिरी में भाई भरत अयोध्या का राजपाट बड़े अच्छे ढंग से चलाते रहे । यमुनालाल जी की यह इच्छा थी कि

भाई भरत का भी एक मंदिर बनाना चाहिए। उन्होंने यह बात विनोबा से जाकर कही थी उन्होंने सुनी और शांत रहे।

कितने संयोग की बात है कि एक दिन जैसे ही विनोबा खेतों में खुदाई कर रहे थे। तो उनकी कुदाल किसी पत्थर से टकराई और इसके साथ ही बड़े जोर की आवाज आयी।

इस आवाज़ के साथ ही उस पत्थर को बड़े आराम से निकाला गया। तो सब लोगों ने आश्चर्य से देखा कि यह तो भगवान् राम की बहुत बड़ी मूर्ति थी। जो अपने भाई भरत से गले मिल रहे थे, पास ही खड़ी थीं सीता और लक्ष्मण।

बस फिर क्या था, सभी लोग इस महान मूर्ति को देख बड़े खुश हुए, उसे साफ करके आश्रम के एक कोने में स्थापित कर दिया गया। कुछ ही दिनों में वहीं पर भरत और राम मंदिर बन गया, जो अब पनवार आश्रम का एक विशेष अंग बन गया है।

धीरे-धीरे पनवार भी एक बड़ा आश्रम बनता चला गया जिस स्थान पर स्वास्थ्य लाभ के लिए विनोबा आए वहीं पर आश्रम का काम शुरू हो गया इसी आश्रम में सब कुछ पैदा किए जाने लगा। आस पास के गाँवों को शिक्षा देना, उन्हें सभ्यता के बारे में बताना धर्मज्ञान देना। यह सब कुछ तो कर रहे थे विनोबा अपने साथियों के साथ।

भले ही उस समय विनोबा जी उस आश्रम में अधिक समय तक नहीं रहे फिर भी उनकी शिक्षा का प्रकाश इन आश्रम-वासियों के साथ रहा। अपनी प्रकार का यह विचित्र आश्रम था। जो कुछ ही दिनों में ऐसा प्रसिद्ध हो गया कि सभी नेता पनवार आश्रम की याद करने लगे थे।

यह सारा श्रेय इस महान संत को ही जाता है। वह जहाँ पर गया वहीं पर एक पूजा स्थल ने ही जन्म लिया।

शिक्षा के बारे में विनोबा के विचार और लोगों से बहुत ही

भिन्न रहे हैं। वे शिक्षा को सदा स्वतंत्र रूप में ही देखना चाहते थे, शिक्षा पर सरकारी कंट्रोल उन्हें बिलकुल पसंद नहीं था। उनका यह कहना है कि—

जीवन में आनन्द की नीति तभी होगी जब शिक्षा प्रकृति के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी होगी । इसका सीधा अर्थ है कि सच्ची शिक्षा प्राकृतिक वातावरण में ही संभव है। ऐसा शिक्षण शहरों में कैसे संभव हो सकता है। क्योंकि शहर तो खेतों से एक दम सटे हुए हैं। शहरी जनता के लिए बड़े दुर्भाग्य की बात है कि उनका खेतों से कोई सम्बन्ध ही नहीं ।

मेरा तो यह मत है कि प्रकृति से संसर्ग न होना इससे बड़ी कोई हानि नहीं हो सकती।

इस विषय में मुझे एक जर्मन विद्वान की बात याद आ रही है जिसने कहा था कि मनुष्य को जीवन में केवल दो बातें सबसे अधिक आनन्द देती हैं।

"ऊपर सितारों का आकाश"

"जीवन में कर्तव्य की जागृति"

ईश्वर ने मनुष्य को शांति के लिए अंधेरा बनाया है। और मनुष्य उसमें प्रकाश करके नष्ट कर डालता है।

विद्यार्थियों की जिम्मेवारियों के बारे में विनोबा ने इस प्रकार कहा है :

विद्यार्थी का पहला कर्त्तव्य यह है कि वह अपनी स्वतंत्रता की पूरी रक्षा करे।

दूसरा है, आत्मसंयम।

तीसरा, अपने जीवन को सेवा में लगा देना।

चौथा, वह सावधान रहकर अपने चारों ओर देखे कि उसके आस-पास क्या चल रहा है ।

विद्यार्थियों की आधुनिक संसार की सारी हलचलों और

विचार प्रणालियों का खुले दिल ले अध्ययन करते रहना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि—

देश की ज़रूरतों को देखते हुए। छुट्टियों की वर्तमान पद्धति को एकदम से बदल देना चाहिए। आजकल गर्मियों में लम्बी छुट्टियाँ दी जाती है इसका कारण यह है कि विदेशी शिक्षक हमारे देश की गर्मी को सहन नहीं कर सकते थे। इसलिए गर्मी के मौसम में स्कूल कालेज बंद करके ठंडे स्थान पर चले जाते थे। किन्तु अब तो वह स्थिति नहीं। क्योंकि विदेशी तो हमारे देश को छोड़ गए हैं। इसलिए अब छुट्टियाँ गर्मी की बजाय बरसात में होनी चाहिए।

नई शिक्षा प्रणाली के बारे में विनोबा जी ने बहुत कुछ कहा है, वह सब कुछ यहाँ पर देना तो मेरे लिए संभव नहीं। हाँ, मैं जरूर कहूँगा कि विनोबा जी शिक्षा के पूरे ढाँचे में ही परिवर्तन चाहते हैं। यह विदेशी ढाँचा हमारे देश की प्रणाली के लिए बिल-कुल ही उचित नहीं। हमें समय के साथ-साथ बदलना ही पड़ेगा।

शिक्षा भले ही स्कूल की हो, कालेज की या स्वयं समाज में ही उसमें सबसे जरूरी बात यह है कि हमारा शरीर, उससे कभी अलग नहीं। यह आत्मज्ञान ही मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है। आत्मज्ञान पर हमारे देश प्राचीन काल से ही जोर दिया गया है। हमारे पुराने विद्वान यह जानते थे कि जब तक मनुष्य की अपनी आत्मा का ज्ञान नहीं होगा। तब तक उसकी सत्य में श्रद्धा नहीं हो सकती सत्य के लिए तो कठिनाइयों का मृत्यु तक का सामना करना पड़ता है। इसलिए प्रत्येक बालक को आत्मज्ञान होना जरूरी है।

यही हमारे शिक्षा के मूल्य सिद्धान्त होने चाहिए।

पहला सत्याग्रही

जैसे विदेशी सरकार ने भारत को भी दूसरे युद्ध में घसीट लिया तो इसके विरोध के लिए गांधी जी ने सत्याग्रह शुरू किया। उसके लिए सबसे पहले सत्याग्रही विनोबा जी को ही चुना गया दूसरे सत्याग्रही नेता पं० नेहरू थे। विनोबा जी के इस चुनाव के लिए महादेव देसाई ने अपने समाचार-पत्र "हरिजन" में इस प्रकार लिखा। जिसका शीर्षक था, "बलिदान का सही चुनाव" इसके कुछ अंश इस प्रकार हैं।

गांधी जो ने पहले सत्याग्रही के रूप में विनोबा को ही क्यों पसंद किया। यह स्वयं उन्होंने चुने हुए शब्दों में बता दिया है, विनोबा की तारीफ इससे अधिक और क्या की जा सकती है। असल चौबीस घंटे भगवान् नाम का स्मरण करते हुए काम में ही बिताते हैं। वास्तव में उनमें बलिदान की भगवान् के नजदीक स्वीकार योग्य और उसे खुश करने वाली चीजें यही हैं।

विनोबा ने जिस काम को हाथ में लिया है वह सिद्ध करता है कि उन्होंने इस योग्य की पूरी तरह अपने अंदर सिद्ध कर लिया है। वे एक आदर्श कातने वाले हैं। आदर्श ग्राम सेवक हैं अत्यन्त बुद्धिमान और विद्वान भी हैं। फिर भी वे गाँववासियों के साथ ऐसे घुलमिल जाते हैं जैसे उनमें से ही एक हों।

सत्याग्रह की इस मुहिम में जिसे गाँधी जी ने अहिंसा की दृष्टि से चुना एकदम शुद्ध और निर्दोष बनाना चाहते हैं। पहला सत्याग्रही चुने जाने का सम्मान ऐसे पुरुष को मिला है। यह एक बहुत बड़ी बात है।

17 अक्तूबर सन् 1940 को विनोबा ने पनवार आश्रम में जब पहला भाषण दिया तब सरकार ने उन्हें गिरफ्तार नहीं किया। इसके बाद सुरगाँव सेलू देवली में भी वे भाषण देते रहे। चौथे दिन

जाकर उन्हें गिरफ्तार करके तीन मास के लिए जेल भेज दिया गया। इस पर विनोबा जी के अपने विचार सुनिए।

मुझ पर युद्ध विरोधी भाषण देने का अपराध लगाया गया है। इसे मैं मंजूर करता हूँ। मैंने यह भाषण बहुत सोच-समझ कर दिए हैं यह कोई अपराध या बुरा काम नहीं है। मैं तो इसे अपना पवित्र कर्तव्य मानता हूँ। अहिंसा में मेरी पूरी श्रद्धा है। इसलिए मैं यहाँ अहिंसा विरोधी सत्याग्रह करते समय बहु। ही खुश हूँ।

इस तरह से ही जेल के तीन मास भी पूरे हो गए थे। उन्हें जेल से छोड़ दिया गया। परन्तु उन्होंने फिर से सत्याग्रह किया।

इस बार उन्हें छः मास की सजा हुई।

यह छः मास भी जेल की काल कोठरी में बीत गए।

अब की बार बाहर आते ही उन्होंने फिर से सत्याग्रह किया।

इस बार सजा पूरे एक वर्ष की सुनाई गई।

यह सजा उन्होंने नागपुर जेल में काटी, इसी जेल में उनके साथी रामकृष्ण बजाज भी थे। जिन्हें विनोबा जी ने जेल में ही संस्कृत पढ़ाई इसका आरंभ बालमीकी रामायण से किया गया।

नागपुर जेल में विनोबा जी का सबसे बड़ा कार्य था—"स्व-राज्य शास्त्र" का लेखन मूलतः यह मराठी भाषा में लिखा गया। अहिंसा पर आधारित राज्य व्यवस्था का इसमें वर्णन है। इस पुस्तक को राजनीति का व्याकरण कहना अधिक उचित है। इस पुस्तक में ही विनोबाजी बताते हैं स्वराज्य वैदिक शब्द है। इसका अर्थ है। प्रत्येक का राज्य अर्थात् ऐसा राज्य जो हर मनुष्य को अपने जैसा लगे।

एक अच्छे राज्य की यही पहचान होती है कि उसमें सदा अच्छे लोग ही शासन कार्य करें। राज्य शास्त्र का मूल अर्थ क्या है ? कि सभी मनुष्यों के सम्पूर्ण हितों की रक्षा इस प्रकार से हो

कि वे आपस में टकराएँ नहीं (1) व्यापक मतदान, (2) बहुमत के अनुसार शासन, (3)अल्पमत का अधिक से अधिक संतोष, (4)मत प्रचार की स्वतंत्रता, (5)सार्वजनिक शिक्षा का प्रबंध।

इस तरह से विनोबा जी ने भारतीय राजनीति और स्वराज के बारे में अपनी इस पुस्तक में खूब खुल कर लिखा जिस का एक-एक शब्द जन हित में जाता था। इसी कारण यह पुस्तक बहुत ही चर्चा का विषय बनी रही।

स्वयं विनोबा जी राजनैतिक क्षेत्रों में काफी चर्चा के विषय बन गए थे।

विनोबा जी ने कभी भी जनता से सम्पर्क नहीं तोड़ा उनके जीवन का हर क्षण जनता की भलाई में ही व्यतीत होता देश की आजादी उनके लिए सर्वप्रथम थी। उसके साथ ही जनता हित भी उन्हें सबसे प्रिय थे। तभी तो विनोबा राजनीति के स्थान पर लोकनीति को संगठित और शक्तिशाली बनाने का कार्य करते रहे। ग्राम पंचायतों के चुनाव के बारे में उन्होंने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए हैं।

"पंचायतें निष्पक्षता और न्याय के साथ तभी काम कर सकेंगी जब गाँव की जमीनों को न्याय के आधार पर पुनः बाँट दिया जाएगा।"

भारत छोड़ो आन्दोलन

1942 के प्रारंभ में विनोबा जी हिन्दी प्रचार के लिए दक्षिण भारत चले गए थे। वे चाहते थे कि इस देश की एक ऐसी भाषा हो जिसमें सभी भारतवासी माला के धागों की भांति पिरोए जाएँ।

यह भाषा केवल हिन्दी ही हो सकती थी।

8 अगस्त सन् 1942 को कांग्रेस के बम्बई सेशन में यह प्रस्ताव पास किया गया—

"करो या मरो।"

करो या मरो का संघर्ष छेड़ने के लिए सारी शक्ति गाँधी जी को दे दी गई थी। उसी रात को ही बम्बई में गाँधी जी के साथ ही कांग्रेस के अन्य बड़े नेताओं को पकड़ लिया गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन सारे देश में जोरों पर छिड़ गया था। गाँधी जी के पीछे ही जैसे सारा देश उठ खड़ा हुआ हो—गाँधी जी जेल में थे तो उनके साथियों ने विनोबा जी को सेवाग्राम में बुलाया ताकि आने वाले दिनों के बारे में कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय कर सकें।

कुछ दिनों पश्चात् विनोबा वापस पनवार आश्रम आ गए। विदेशी सरकार की नजरें विनोबा पर निरंतर लगी हुई थीं उन्हें यह भली-भाँति पता था कि गाँधी के पश्चात् सारी जनता विनोबा की एक ही आवाज पर उठ खड़ी होगा—

तभी तो उन्होंने विनोबा जी को भी गिरफ्तार कर लिया था केवल गिरफ्तारी की बात होती तो भी सहन हो जाती मगर इसके साथ ही पनवार बालबाड़ी और गोपुरी के आश्रमों को भी सील कर दिया गया। और साथ ही उन्हें जप्त करने के आदेश दे दिए।

कितनी ही जेलों में रखा गया था विनोबा को शायद अंग्रेज जनता की आवाज से डर रहे थे।

दक्षिण भारत की जेलों में रहते हुए विनोबा ने दक्षिण की सभी भाषाओं को सीखा, इस तरह उन्होंने जेल के इस समय का भी पूरा-पूरा उपयोग किया।

जेल में उन्होंने कई मास तक का मौन रखा, फिर भी वे सब

प्रकार के कैदियों से मिलते थे और उनके विचार सुनते थे, जेल में ही उनके एक साम्यवादी मित्र ने उन्हें साम्यवादी साहित्य पढ़ने के लिए कहा, तो विनोबा बोले ठीक है, जब तक मैं चरखा कातता रहूँगा तब तक जितनी भी पुस्तकें आप मुझे पढ़कर सुनाएँगे, मैं उन्हें सुन लूँगा।

वह साम्यवादी मित्र उनकी बात मान, कभी एक घंटा, कभी दो घंटे प्रत्येक दिन उन्हें साम्यवादी साहित्य पढ़कर सुनाता रहा, लगभग एक वर्ष के पश्चात् विनोबा और उनके कुछ साथियों को मध्य प्रदेश की सेवनी जेल में भेज दिया गया, जेल में भी उन्होंने अपना पढ़ने-लिखने का काम जारी रखा, उन्हीं दिनों उन्होंने जेल में ही अरबी और उर्दू भाषा सीखी।

सेवनी जेल में विनोबा जी पन्द्रह मास तक रहे, इस जेल में उन्होंने राजनैतिक कैदियों के बीच स्थित प्रज्ञ-दर्शन पर उठ रहा प्रवचन किए, जेल में शाम को जो प्रार्थना सभा होती थी उसमें इन श्लोकों को हर रोज ही पढ़ा जाता था। बाद में यह प्रवचन गाँधी मार्ग से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो गए थे।

जेल से जैसे ही मई 1944 में बाहर आए तो सीधे वर्धा चले गए, वहीं पर उन्होंने अपना कार्य शुरू कर दिया। सर्वोदय के प्रयोग के तौर पर सामूहिक भोजनालय आरम्भ करके वे कुछ दिनों के पश्चात् पनवार चले गए।

सारा देश स्वतन्त्रता संग्राम में कूद चुका था, गाँधी जी के कहने पर सारा देश एक आवाज होकर पुकारने लगा था—

"हमें आजादी चाहिए।"

"आजादी।"

इधर विनोबा जी एक नई सामाजिक क्रांति की नींव रख रहे थे। उन्होंने यह महसूस किया था कि भारत में रहने वाले करोड़ों लोग गाँव में रहते हैं, इसलिए हमें सर्वप्रथम इन गाँव वासियों की

हालत में सुधार लाना होगा, हमारे कार्यकर्त्ताओं को हर गाँव में जाकर वहाँ जन जागृति की लहर पैदा करनी होगी।

यही सोच वे गाँव-गाँव जाने लगे और वहाँ के लोगों को यह बताने लगे कि उन्हें सदियों के अंधेरों से निकल कर प्रकाश में आना ही होगा, इसीलिए उनके कार्यकर्त्ता, गाँववासियों के घरों की सफाई करते, उनका मैल उठाते, उनके छोटे-छोटे बच्चों को अपने हाथों से नहलाते और उन्हें खादी के वस्त्र पहना स्कूल भेजते।

गाँव वासियों ने वास्तव में छः युगों के पश्चात् ऐसा महान् संत देखा था जो उनकी सेवा कर रहा हो, जिसने उनके घरों में अपने हाथों से झाड़ू लगाया हो, उनको तो प्रेरणा मिली थी, जीने का एक नया मार्ग मिला था, सत्य तो यह था कि विनोबा से पहले गाँव वालों के बारे में किसी नेता ने सोचा ही नहीं था।

पनवार आश्रम से सुबह उठते ही विनोबा अपने कंधे पर फावड़ा रखकर सुरगाँव की ओर जाते तो कुछ लोग उनसे पूछते।

'आप कब तक इनकी सेवा करते रहेंगे ?'

पूरे बीस वर्ष तक, क्योंकि फिर आज के बच्चे बड़े होकर यह कार्य स्वयं सम्भाल लेंगे। तब वे यह काम स्वयं करने लगेंगे—

—भविष्य के सपने तो उनके सामने थे ही, इसके साथ ही उन्होंने अपना लेखन कार्य भी आरम्भ रखा, जैसा कि सन् 1945 से मई 1946 तक के बीच, कई महीने अपने छोटे भाई शिवाजी की मदद से विनोबा जी ने गीताई में प्रयुक्त शब्दों का एक कोश इस विषय के अभ्यासियों के लिए तैयार करने में लगाए।

देश में राजनीति अपने पूरे शबाब पर थी, अंग्रेज जानते थे कि आजादी की इस लहर को कुचला नहीं जा सकता, फिर भी उन्होंने अपनी चालें नहीं छोड़ीं।

"फूट डालो और राज करो।"

अंग्रेजों ने मुस्लिम लीग जैसी साम्प्रदायिक पार्टी की नींव रखवाकर भारतीय स्वतन्त्रता के इतिहास में एक घृणा पूर्ण मोड़ दे दिया उन्होंने हिन्दू और मुस्लिम दो कौमों को एक दूसरे से अलग किया जिससे भारत विभाजन की माँग की गई, इसीलिए सारे देश में—साम्प्रदायिक दंगे करवाए गए, अंग्रेज लोग यह सिद्ध करना चाहते थे कि हम आजादी किसे दें, यह लोग तो एक-दूसरे के खून के प्यासे हो रहे हैं।

उन्हीं दिनों नवाखली में, भयंकर हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए जिसमें हजारों लोग बेघर हो गए, सैंकड़ों की जानें गईं, औरतों की वेइज्जती की गई।

—गाँधीजी इससे बहुत दुःखी हुए थे स्वयं नवाखली गए—यही नहीं सारे देश में ही वह भयंकर आग फैल रही थी। अंग्रेजों की यह चाल सफल रही थी। सारे देश भक्त इन हालात से चिंतित थे।

—किन्तु यह सब हालात नहीं सुधरे सारे देश में जैसे आतंक सा फैल गया था।

मैं इन बातों की गहराइयों में यहाँ पर जाना नहीं चाहूँगा क्योंकि यह तो इतिहास के ऐसे खूनी पृष्ठ हैं जिन पर विवाद के सिवा कुछ नहीं, उस समय के नेताओं में भी खूब मतभेद थे।

"देश का बँटवारा।"

"भारत माता के टुकड़े।"

"यह कौन-सा देश भक्त चाहता था।"

"कौन-सा भारतवासी, यह चाहता था?"

"यह सब कुछ हुआ तो क्यों?"

"किसको यह अधिकार था, हमारे देश के टुकड़े करने का?"

"हमारे नेताओं ने देश पर मर-मिटने वाले उन लाखों शहीदों के खून का सौदा क्यों किया?"

यह ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर आने वाली संतानें माँगती रहेंगी और खूनी इतिहास मौन रहेगा।

विनोबा जैसे महान् संत केवल खून के आँसू बहाकर ही रह जाएँगे, हाँ 15 अगस्त सन् 1947 को जब भारत आजाद हुआ तो उस दिन विनोबा जी अपने आश्रम में ही काम कर रहे थे।

शाम को उन्होंने अपनी प्रार्थना सभा में कहा कि अब पुराना झंडा उतर चुका है और उसके स्थान पर नया झंडा लग गया है। इसके साथ ही हमारे विचार भी बदलेंगे, काम करने के ढंग भी बदलेंगे, हमारी सोच भी बदलेगी।

हम गुलामी की जंजीरों को तोड़कर आजाद हो गए हैं, अब हमें इस नए देश का निर्माण करना है। इसके लिए हमारे बच्चों को नई शिक्षा की जरूरत है, नयी शिक्षा हमारे इस समाज को नया मोड़ दे सकती है।

आजादी के पश्चात्

जून 1947 को विनोबा के पिता सख्त बीमार हो गए थे, वे उनकी माता की मृत्यु के पश्चात् निरन्तर तीस वर्षों से अकेले रह रहे थे। अपने पाठकों को एक आश्चर्य की बात और बता दूँ कि विनोबा को अपने पिता से मिले पूरे बारह वर्ष हो गए थे। वह तो देश सेवा में खो गए थे जनता के दुःखों को दूर करना चाहते, इस बीच न जाने कितने हजार लोगों को उन्होंने नई शिक्षा देकर देश सेवा के लिए तैयार किया।

अपने साथियों के कहने पर वे अपने पिता को देखने के लिए

धुलिया गए, उनके जाने के ठीक दूसरे दिन ही शरद पूर्णिमा को उनके पिता की मृत्यु हो गई। इस प्रकार से उन्हें अपने पिता जी की जुदाई का दु:ख भी देखना पड़ा।

गाँधी जी के कहने पर विनोबा ने हरिजन के लिए कुछ लेख लिखने आरम्भ किए, इसमें उनका पहला लेख "बाधा कहाँ है" के शीर्षक से छपा था। जो खादी के बारे में था उसमें विनोबा ने देश के लोगों और सरकार से खुली अपील की थी कि वे खादी को ही अपनाएँ। इसी खादी ने तो हमें आजादी दिलवाई है। आज हमें इसे हर घर तक पहुँचाना चाहिए, यही हमारे देश की राष्ट्रीय वेश-भूषा है।

एक-दूसरे लेख का शीर्षक था, "मुद्रा नहीं अनाज चाहिए" इसमें उन्होंने देश के किसानों के हितों के बारे में खुलकर लिखा। वे अपने लेख में सरकार की खुलकर आलोचना करते नजर आए जब सरकार ने यह निर्णय किया था कि देश में अच्छी नसल की गायों की काफी कमी है। इसके लिए हमें विदेशों से गायें मंगानी चाहिए।

विनोबाजी ने अपने लेख में लिखा कि यहाँ तो किसानों पर खुला जुल्म है, हमें उनके साथ विश्वासघात नहीं करना चाहिए, बल्कि उनके पास जो भी गाएं हैं उन पर संतुष्ट रहना चाहिए, गाय हमें दो लाभ देती है, पीने के लिए दूध और खेती करने के लिए बैल। केवल दूध की ही बात सोचना ठीक नहीं,हमें दोनों बातों को सामने रखना होगा, फिर शहर के लोगों की दूध की जरूरतें पूरी करना गाँव के लोगों के लिए जरूरी नहीं है, इस दूध पर तो पहले स्वयं गाँव वासियों का ही हक है, हाँ यदि अपनी जरूरतें पूरी करने के पश्चात् उनके पास दूध बच जाए तो वे उसे शहरों तक पहुँचाएँ।

गौ पालन को दूसरे ग्राम उद्योगों से अलग नहीं किया जा

सकता। इस कार्य से बहुत से गाँव वासियों को काम मिल सकता है।

गौ पालन से किसानों को घर पर ही अपने बैल तैयार मिल सकते हैं, जिससे उन्हें दोहरी बचत होती है, गाय का दूध और साथ में खेती के लिए बैल।

इस तरह के बहुत से लेख विनोबा जी ने गाँधीजी के कहने पर हरिजन में लिखे। जो देश की जनता को नया मार्ग दिखाते रहे।

गाँधीजी की हत्या

भारत विभाजन को विनोबा ने हिमालय जैसी भूल से संज्ञा दी थी, भले ही वे अपने मुँह से कुछ नहीं बोले थे किन्तु उनके विचार यही थे कि यह एक बड़े विनाश की नींव रख दी गई है।

शायद इसी का ही यह परिणाम था कि—

30 जनवरी शाम की प्रार्थना सभा के समय, एक युवक ने गाँधी जी की हत्या कर दी, यह था हमारे इतिहास का सबसे बड़ा काला कारनामा। जिसे अंग्रेज सरकार ने तो नहीं किया, उसे अपने ही एक देश वासी ने करके पूरे देश के माथे पर कालिमा पोत दी।

विनोबा जी को जैसे ही यह बुरी खबर सुनने को मिली तो उनका हृदय तड़प उठा। उन्होंने इस दुर्घटना की तुलना लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व की उस दुर्घटना से की जब एक शिकारी ने भगवान् श्रीकृष्ण को हिरण समझ कर उन्हें तीर मार कर उनकी हत्या कर दी थी। उन्होंने खुले शब्दों में कहा कि यदि इस संसार में किसी ने हिन्दू धर्म का नाम उज्ज्वल रखा है तो वे केवल गांधी

जी ही हैं। उन्हें हिन्दू धर्म का दुश्मन समझना सत्य की विडम्बना है।

विनोबा ने कहा, गाँधीजी पर उस समय गोली चलाई गई जब वे प्रार्थना के लिए जा रहे थे और जब उनका चित्त पूरी तरह से भगवान् में लगा हुआ था, इसलिए उनकी मृत्यु तो भव्य थी।

उन्होंने अपने कार्यकर्त्ताओं से कहा कि हमें गाँधीजी की पवित्र स्मृति में शांतिपूर्ण रचनात्मक कार्य करते रहना चाहिए। इस देश में असंख्य जाति तथा भाषाओं और धर्मों के समुदाय हैं, इन सबको प्रेम के बंधन में बाँधने वाली शक्ति अहिंसा ही है। इसलिए हम सबको मिलकर रहना चाहिए। उनके अधूरे कार्यों को हमें पूरा करना चाहिए।

देश की एकता के बारे में विनोबा ने अपने कार्यकर्त्ताओं से यह बात कही कि जब पानीपत की लड़ाई हो रही थी तो एक शाम अहमद शाह ने मराठों की छावनी में जगह-जगह आग जलते देख अपने सेनापतियों से पूछा कि यह क्या बात है।

"सेनापतियों ने बताया कि हिन्दुओं में बहुत-सी जातियाँ हैं, वे सब अपने अलग-अलग चूल्हे जलाते हैं।"

तभी अहमदशाह ने हँसकर कहा था कि।

"फिर तो यह युद्ध हम जीत गए।"

इसका भावार्थ यही था कि हम सब एक नहीं हमारे बीच में जो दीवारें खड़ी की गई हैं वे हमारी ताकत को कमजोर करती हैं। इसलिए हमें यह सब भेदभाव मिटा देने चाहिए।

विनोबा के यह शब्द थे कि—

बापू एक महान् व्यक्ति नहीं एक संस्था थे, सारा संसार उनका परिवार था, उन्होंने हमारे सारे पापों का बोझ अपने सिर पर रख लिया था, उनकी हत्या का पाप अकेले गौडसे (जिसने गाँधी की हत्या की थी) के सिर पर नहीं बल्कि हम सबके सिर पर है,

क्योंकि खामियां तो हम सब में हैं, इसलिए हमारा सबसे बड़ा कर्त्तव्य है कि हम इन खामियों को दूर करें।

तो एक अन्य प्रवचन में विनोबा ने कहा।

केवल अहिंसा का पालन करने से काम नहीं चल सकता, अब तो सम्पूर्ण राष्ट्र स्तर पर अहिंसा का विकास करना जरूरी है, सैकड़ों वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध और महावीर जी ने संसार के सामने अहिंसा को आदर्श के रूप में रखा था, गाँधी जी ने एक कदम आगे बढ़कर सामूहिक तौर पर अहिंसा का प्रयोग करके उसे व्यापक बनाया है।

गाँधीजी को विनोबा एक पल के लिए नहीं भूल सके थे, हर समय हर पग पर उन्हें याद करते रहे, अपने कार्यकर्त्ताओं से उन्होंने हर समय यही कहा कि हमें गाँधीजी की आत्मा की शांति के लिए उनके अधूरे कामों को पूरा करना है।

सर्वोदय समाज

गाँधी जी की हत्या के पश्चात् कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता चिंतित हो गए थे, उस समय देश के सामने बहुत बड़ा राजनैतिक संकट उठ खड़ा हुआ था, इसी गंभीर समस्या को सुलझाने की दृष्टि से देश रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं का एक सम्मेलन 11 से 18 मार्च को सन् 1948 में सेवा ग्राम में बुलाया गया जिसकी अध्यक्षता की थी डॉ० राजेन्द्र प्रसाद जी ने।



विनोबाजी और डा० राजेन्द्र प्रसाद जी

अन्य लोगों में पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद जैसे नेताओं के साथ ही कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता इसमें शामिल हुए; पं० नेहरू ने कार्यकर्त्ताओं के सामने बहुत लम्बा भाषण किया, अब उनके पश्चात् विनोबा जी बोले।

पं० नेहरू को मैं सरकार के प्रतिनिधि के रूप में नहीं देख रहा हूँ बल्कि उन्हें गाँधी परिवार का एक सदस्य मानता हूँ, वे और मैं इस परिवार में कम से कम पच्चीस वर्ष से हैं, परन्तु हम आज पहली बार ही मिल रहे हैं, इसमें दोष न उनका है, न मेरा, गाँधीजी का परिवार ही इतना बड़ा है, उनके सदस्यों को एक-दूसरे से निकट से जानना आसान नहीं, पंडित जी ने जो कठिनाइयाँ बताई हैं, उन कठिनाइयों से तो हर राजगद्दी पर बैठने वाले को ही चार होना पड़ता है। हम सब कार्यकर्त्ताओं पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आती है, हम सब लोग एक परिवार के सदस्यों की भाँति काम करें।

इसके पश्चात् डॉ० राजेन्द्र प्रसाद जी ने अपना लम्बा भाषण

किया और साथ ही उन्होंने विनोबा जी से कहा कि वे मार्ग दर्शन करने के लिए हमारे आगे आएँ।



विनोबा जी और पं० नेहरू एक-दूसरे के प्यार में खोए हुए

राजेन्द्रप्रसाद जी की इस प्रार्थना को सुन विनोबा जी ने कहा, इस प्रसंग पर मेरे लिए कुछ भी कहना कठिन है, मैं तो गांधी सेवा संघ का सदस्य भी नहीं हूँ। यद्यपि मैं गांधी जी के साथ बहुत लम्बे समय तक रहा हूँ, फिर भी मैं बापू के द्वारा पालतू बनाया गया जानवर-सा रहा हूँ।

गांधी जी ने अनेक बार कहा था कि मेरे उत्तराधिकारी पं० नेहरू होंगे, इसलिए इस कठिन अवसर पर हमारा मार्ग-दर्शन तो नेहरू जी ही कर सकते हैं।

सारे प्रश्नों का मध्यबिन्दु साधन शुद्धि है। दूसरी बातों पर हमारे विचार अलग-अलग हो सकते हैं; परन्तु यदि हम एक

बुनियादी बात पर सहमत हो जाते हैं तो हमारी सारी कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी। इस बुनियाद पर यदि हम एक समिति मोर्चा बना लेते हैं तो सचमुच बड़ी सफलता होगी।

पं० नेहरू ने विनोबा जी के भाषण के बीच में ही उठकर कहा, "मैं विनोबा की इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ। आज हमारी सबसे बड़ी चिंता यह है कि हम इतनी कठिनाइयों से मिली आजादी की रक्षा कैसे करें ? आजादी को असली खतरा बाहर से नहीं, अन्दर से है। यदि हिंसा की हवा ऐसे ही चली तो राष्ट्र छिन्न-भिन्न हो जाएगा।"

पं० नेहरू ने अपना भाषण समाप्त करते हुए कहा—

"आज रात को ही मैं दिल्ली लौट रहा हूँ, और फिर काम-काज के चक्कर में फँस जाऊँगा। हाँ, मैं इतना आश्वासन आप सबको देता हूँ कि मैं सदा आपके साथ हूँ, आप लोग जो भी निर्णय करेंगे, मैं उसका पूरा-पूरा पालन करूँगा !"

दूसरे दिन ही विनोबा जी ने सर्वोदय समाज की स्थापना करने का विचार किया और इस कार्य को पूरा भी किया। उन्होंने सर्वोदय समाज के साथ, गांधी जी का नाम जोड़ने के लिए मना कर दिया। उन्होंने अपने कार्यकर्त्ताओं से कहा—

"हम आदर्शों को ही सामने रखें, बापू का नाम लेकर न दौड़ें, हमारी मुख्य शक्ति शांति नैतिक और आध्यात्मिक होगी। प्रार्थना और समर्पण की भावना को लेकर आगे बढ़ें।"

बहुत लम्बे विचार-विमर्श के पश्चात् इस संस्था का नाम "सर्वोदय समाज" रखा गया।

उद्देश्य, सत्य और अहिंसा पर आधारित समाज की स्थापना करना। ऐसा समाज जिसमें जाति-पाँति और धर्म न हो, शोषण न हो तथा व्यक्ति और समाज दोनों को अपने विकास का पूरा मौका मिले।

इस प्रकार से विनोबा जी ने अपनी एक नई आदर्शवादी संस्था की नींव रखी। जिसके कार्यकर्त्ता त्याग और परिश्रम जीवित मूर्ति का रूप धारण कर सारे समाज में फैल गए। इसके अध्यक्ष थे—किशोरलाल मशरूवाला। जिन्हें यह अधिकार दिया गया था कि वे सर्वोदय समाज को आगे बढ़ाने के लिए एक समिति की नियुक्ति कर लें। उन्होंने जो समिति बनाई वह इस प्रकार थी :

रघुनाथ श्री घरघोत्रे, सुशीला बहन, धीरेन्द्र मजूमदार, एम सत्यनारायण, रामदेव ठाकुर, एवेद रतनम् पिल्लै, मनमोहन चौधरी, तिमप्पा नायक, कावल भाई मेहता, महेशदत्त मिश्र, काशीनाथ त्रिवेदी, श्रीमन नारायण।

यह थी सेवा संघ की स्थापना की तस्वीर, जो मैंने अपने पाठकों के सामने रखी। वास्तव में ही ऐसी एक आदर्श संस्था की देश को उस समय बड़ी भारी जरूरत थी। गांधी जी की मृत्यु के पश्चात् जो राष्ट्र को कमी महसूस हो रही थी, उस कमी को यदि कोई दूर कर सकता था तो केवल विनोबा जी ही थे। सारे बड़े नेताओं की नजरें उस समय इन्हीं पर लगी हुई थीं।

लगभग दो वर्ष के पश्चात् स्व सेवा संघ ने वार्षिक सर्वोदय



विनोबा जी और सर्वोदय कार्यकर्त्ता
पं० नेहरू और दूसरे बड़े नेताओं के साथ

सम्मेलन करने की जिम्मेदारी उठा ली। इस बीच बहुत-सी घटनाएँ ऐसी भी घटीं, जिससे संस्था के कार्यकर्त्ताओं को दुःख भी हुआ, किन्तु वे सब एक आदर्श की भाँति आगे बढ़ते रहे।

सर्व सेवा संघ के अन्दर ही एक शांति दल की स्थापना की गई जो देश में साम्प्रदायिक शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष करेगा! इस दल के बारे में डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने लिखा:

गांधी जी बहुत दिनों से सोच रहे थे कि कार्यकर्त्ताओं का एक ऐसा दल बनाया जाए, जिसका सर्व प्रथम काम समाज में शांति बनाए रखना। उन्होंने कई बार यह बात कही भी थी किन्तु वह पूरी न हो सकी।

स्वयं विनोबा जी ने 11 अप्रैल सन 1948 को हरिजन में एक लेख लिखा। उसका शीर्षक था—

"सर्वोदय का प्रारंभ"

इसी लेख में उन्होंने सर्वोदय के नियमों को विस्तार से लिखा:

1. "प्रत्येक कार्यकर्त्ता नियमपूर्वक सूत काते।"
2. "वह खादी ही पहने, अपने सूत की या प्रमाणित सूत की।
3. "जहाँ तक हो वह गाँव की बनी चीजें काम में लाएँ।"
4. "जब घर पर हो तो गाय का दूध पिए।"
5. मास में एक बार स्वयं पाखाना सफाई या गाँव की सफाई का काम करे।"
6. "यदि बुनियादशाला उपलब्ध हो तो अपने बच्चों को वहीं पढ़ने भेजें।"
7. "वह देवनागरी, उर्दू और दक्षिण भारत की कोई भी भाषा सीखने का प्रयत्न करे।"

"इन विषयों से आप यह तो अंदाजा लगा ही सकते हैं कि सर्वोदय समाज की स्थापना के पीछे कैसे महान उद्देश्य थे। विनोबा जी देश को एक स्वच्छ, ईमानदार, देश-भक्त सेना देना

चाहते थे, यही तो था गांधी जी का अधूरा काम जिसे पूरा करने चले थे विनोबा जी।

पद-यात्रा पर

सर्वोदय समाज का तीसरा अधिवेशन, हैदराबाद से लगभग छ: किलोमीटर की दूरी पर शिवराम पल्ली में हुआ। विनोबा जी इसमें शामिल नहीं होना चाहते थे। मगर उनके साथियों ने उन पर इतना जोर डाला कि उन्हें मजबूर होकर हाँ तो करनी पड़ी, किन्तु इनकी यह शर्त थी कि मैं पद-यात्रा करके वहाँ पर पहुँचूंगा।

आप सोच सकते हैं कि पनवार आश्रम से हैदराबाद की दूरी सैकड़ों मील दूरी होगी। और इस महान सन्त ने इतना लम्बा सफर पैदल करने की इच्छा प्रकट की।

यह केवल इच्छा ही नहीं थी, बल्कि उनका निर्णय था, इस निर्णय को कोई बदल नहीं सकता था।

8 मार्च 1951 को विनोबा जी ने अपने साथियों समेत यहाँ लम्बी यात्रा आरंभ की। उनके साथ महादेव ताई, महाल साहेवी उनके सचिव दामोदर दास मूदडा, दत्तोबा, दास्ताने, और माऊर पान से थे। इन पद यात्रियों का सामान लेकर साथ में ही एक बैलगाड़ी चल रही थी।

रास्ते में विनोबा जी वर्धा में लक्ष्मी नारायण मंदिर भी गए। वहाँ पर उनका स्वागत करने वालों में जानकी देवी बजाज भी थीं।

अपनी इस पद यात्रा में विनोबा जी 15 कि० मी० से 20 कि० मी० तक का सफर करीब-करीब हर रोज करते थे। उनके रास्ते में जितने भी गाँव आते वहीं पर गाँव वासियों से मिलते-जुलते अपनी प्रार्थना सभा भी करते।

इसी तरह विनोबा जी ने करीब 500 कि० मी० की लम्बी दूरी सर्वोदय सम्मेलन शुरू होने से एक दिन पहले 7 अप्रैल को पूरी कर ली। यहीं से उन्होंने भूदान आन्दोलन को देश भर में फैला देने के लिए कार्यकर्त्ताओं को कहा—

इसके पश्चात् विनोबा जी पं० नेहरू के बुलावे पर दिल्ली आए। वह लगभग दस मास तक दिल्ली रहे। वे गाँधी जी की समाधि के पास छोटी सी एक कुटिया में ठहरे। वास्तविक शांति उन्हें गाँधी जी की समाधि पर ही मिलती थी।

भू-दान यज्ञ

सारे देश में जमींदारों जागीरदारों के विरुद्ध लम्बा संघर्ष चल रहा था। साम्यवादी दल ने गरीब किसानों को एक स्थान पर इकट्ठा कर क्रांति का बिगुल बजा दिया था। इस तरह से देश में चारों ओर हिंसा का बाजार गर्म हो गया था। क्रांति के नाम पर देशवासी आपस में ही लड़ रहे थे। विशेष रूप से तैलंगाना में तो यह खूनी क्रांति हर गाँव में नजर आने लगी थी। दक्षिण में इस भयंकर और खूनी क्रांति को देख विनोबा अत्यंत दुःखी हुए वे समझ गए थे कि यह सब कुछ देश के हित में नहीं है। इससे तो घृणा की दीवारें और ऊँची होंगी। गरीब और अमीर का यह संघर्ष भयंकर रूप धारण कर लेगा।

इस संघर्ष और हिंसा को रोकने के लिए विनोबा ने—"भूदान आन्दोलन आरंभ किया। इस काम के लिए उन्होंने सारे देश में पदयात्राएँ आरंभ करके बड़े-बड़े ज़मींदारों से अपील की कि वे अपनी खुशी से अपनी ज़मीन में से कुछ भाग उन लोगों को दे दें जिनके पास जमीन नहीं है। इसी विषय में उन्होंने अपने एक भाषण में कहा—

"गरीबों को मदद के लिए साम्यवादियों का धनवानों का खून करने की जरूरत नहीं प्रजातंत्र में पिस्तौल का स्थान अब वोट ने ले लिया है। साम्यवादी खुल कर सामने आएं और लोक मत को शिक्षित करें। अगर वे हिंसा को छोड़ दें तो मैं इस काम के लिए उनके साथ देश के कोने-कोने में घूम सकता हूँ।"

इस खूनी क्रांति को रोकने के लिए वास्तव में ही विनोबा ने बहुत बड़ा काम किया। भूदान के इस महान कार्य से बहुत से लोगों को जमीन मिलने लगी थी। सर्वोदय कार्यकर्त्ता हर गाँव में जाकर हिंसा के विरुद्ध प्रचार कर रहे थे। साथ ही बड़े ज़मींदारों से यह प्रार्थना करते कि देश हित और जन हित के लिए स्वयं अपनी ज़मीनों को गरीबों में बांट देना चाहिए।

हिंसा किसी भी दुःख का उपाय नहीं करता। उन्होंने गाँव-गाँव में जाकर कहा कि—

"मैं मानता हूँ कि मनुष्य का हृदय बदल सकता है और हमारी सारी बुराइयों का एक मात्र इलाज अहिंसा है। हमारी यह क्रांति मानसिक है। ऐसी क्रांति हिंसा से नहीं हो सकती वह तो बुद्ध ईसा या गाँधी जी के बताए मार्ग से ही हो सकती है।"

मैं यह समझता हूँ कि इस महान संत ने अपने देश को गृह युद्ध से बचाने के लिए एक मूक क्रांति का मार्ग निकाल लिया था।



इस चित्र में आप विनोबा जी की शांति यात्रा और भूदान के लिए कर रहे प्रयत्नों को देख सकते हैं वे गाँव-गाँव में जाकर भूदान के बारे में लोगों को समझाते थे। उनका एक ही नारा था। "नफरत को प्यार से जीतो।

इस महान तपस्वी ने एक नया त्याग मार्ग निकाल कर सारे संसार को यह बता दिया था कि अहिंसा की शक्ति हिंसा से कहीं अधिक है। फिर इस इन्सान का तो कहना ही क्या है जो गरीबों के लिए दिन-रात चिंतित था जो पैदल चल-चल कर हर गाँव में जाकर उनके लिए ही सब कुछ कर रहा था।

यहाँ पर मैं तो यह कहूँगा कि आज केवल हमारी जनता को ही नहीं बल्कि देश के सारे नेताओं को भी विनोबा जी के जीवन को सामने रख कर कुछ सीखना चाहिए।

"क्या राजनीति का अर्थ राजगद्दी ही है ?"

इस प्रश्न को जब मैं अपने सामने रखता हूँ तो मुझे आज की घटिया राजनीति के खेल सामने नज़र आने लगते हैं। आज के नेताओं में देश सेवा की भावना मिटती नज़र आ रही है। उनके सामने तो एक ही काम है। राजगद्दी—

"क्या आज के नेता विनोवा जी के जीवन से कुछ सीख सकेंगे ?"

"क्या वे देश भर में पद यात्रा करने की हिम्मत रखते हैं ?"

हवाई जहाजों और रेल के वातानुकूल डिब्बों में सफर करने वालों ने कभी उस महान् व्यक्ति के बारे में भी सोचा है। जिसने अपने शरीर पर कभी साधारण खादी के सिवा कुछ न पहना ?

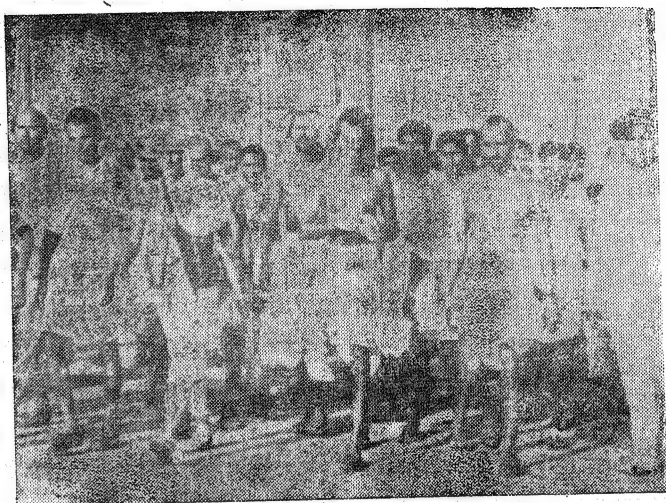
"—नहीं···नहीं···मैं समझता हूँ। आज की राजनीति में मुझे चारों ओर कोई भी त्याग करने वाला नज़र नहीं आता। हर ओर वोट लेकर नेता बनने की भूख का प्रचंड नाच हो रहा है।"

—गाँधी जी ने जो हमें त्याग मार्ग दिखाया था।

उसे अपनाया था विनोबा जी ने गाँधी जी की मृत्यु ने सारे देश को अंधेरे में धकेल दिया था। किन्तु विनोबा जी ने अपने महान् कार्यों से हमें यह वता दिया कि वे गाँधी जी के आदर्शों से भी वहुत आगे निकल गए हैं।

केवल भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में इस शांतिप्रिय संत को चर्चा का विषय बनाया गया। खूनी क्रांति के बदले में श्रद्धा और प्रेम से मन जीत कर हर जरूरत मंद की इच्छा पूरी करने का यह नया मार्ग विनोबा ने ही सारे संसार को दिखाया था।

यह क्रांति केवल भूदान से ही नहीं बल्कि विनोबा ने गांव वासियों से यह भी कहा कि आप लोगों को अपने गाँव में छोटे-छोटे उद्योग स्थापित करके बेकारीं को समाप्त करना होगा। इस विषय में उन्होंने किसानों से कहा था कि—



इस चित्र में आप विनोबा जी की शांति यात्रा और भूदान के लिए कर रहे प्रयत्नों को देख सकते हैं वे गाँव-गाँव में जाकर भूदान के बारे में लोगों को समझाते थे। उनका एक ही नारा था।

"नफरत को प्यार से जीतो।

इस महान तपस्वी ने एक नया त्याग मार्ग निकाल कर सारे संसार को यह बता दिया था कि अहिंसा की शक्ति हिंसा से कहीं अधिक है। फिर इस इन्सान का तो कहना ही क्या है जो गरीबों के लिए दिन-रात चिंतित था जो पैदल चल-चल कर हर गाँव में जाकर उनके लिए ही सब कुछ कर रहा था।

यहाँ पर मैं तो यह कहूँगा कि आज केवल हमारी जनता को ही नहीं बल्कि देश के सारे नेताओं को भी विनोबा जी के जीवन को सामने रख कर कुछ सीखना चाहिए।

"क्या राजनीति का अर्थ राजगद्दी ही है ?"

इस प्रश्न को जब मैं अपने सामने रखता हूँ तो मुझे आज की घटिया राजनीति के खेल सामने नज़र आने लगते हैं। आज के नेताओं में देश सेवा की भावना मिटती नज़र आ रही है। उनके सामने तो एक ही काम है। राजगद्दी—

"क्या आज के नेता विनोबा जी के जीवन से कुछ सीख सकेंगे ?"

"क्या वे देश भर में पद यात्रा करने की हिम्मत रखते हैं ?"

हवाई जहाजों और रेल के वातानुकूल डिब्बों में सफर करने वालों ने कभी उस महान् व्यक्ति के बारे में भी सोचा है। जिसने अपने शरीर पर कभी साधारण खादी के सिवा कुछ न पहना ?

"—नहीं…नहीं…मैं समझता हूँ। आज की राजनीति में मुझे चारों ओर कोई भी त्याग करने वाला नज़र नहीं आता। हर ओर वोट लेकर नेता बनने की भूख का प्रचंड नाच हो रहा है।"

—गाँधी जी ने जो हमें त्याग मार्ग दिखाया था।

उसे अपनाया था विनोबा जी ने गाँधी जी की मृत्यु ने सारे देश को अंधेरे में धकेल दिया था। किन्तु विनोबा जी ने अपने महान् कार्यों से हमें यह बता दिया कि वे गाँधी जी के आदर्शों से भी बहुत आगे निकल गए हैं।

केवल भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में इस शांतिप्रिय संत को चर्चा का विषय बनाया गया। खूनी क्रांति के बदले में श्रद्धा और प्रेम से मन जीत कर हर जरूरत मंद की इच्छा पूरी करने का यह नया मार्ग विनोबा ने ही सारे संसार को दिखाया था।

यह क्रांति केवल भूदान से ही नहीं बल्कि विनोबा ने गांव वासियों से यह भी कहा कि आप लोगों को अपने गाँव में छोटे-छोटे उद्योग स्थापित करके बेकारी को समाप्त करना होगा। इस विषय में उन्होंने किसानों से कहा था कि—

"किसान अपने आप को तभी जिन्दा रख सकेंगे जब वे अपने गाँव में पैदा होने वाले कच्चे माल से तैयार माल भी बना सकेंगे।

तेलंगाना की यह ऐतिहासिक पदयात्रा 51 दिन चली वे दो सौ गाँव में से गुजरे। इस भूदान कार्य में उन्हें किसानों (जमींदारों) ने दो सौ एकड़ जमीन दी जिसे उन्होंने गरीबों और जररूतमंद लोगों में बाँट कर एक नयी शांति द्वारा क्रांति की नींव रखी। साथ ही उन्होंने गाँव वासियों के पाँच सौ झगड़ों को भी आपसी प्यार से निपटाया और उनके भाषणों को करीब दो लाख लोगों ने सुना।

भूदान की नींव तो उन्होंने इस क्षेत्र म रख दी थी। साथ ही उन्होंने अपने विशेष कार्यकर्त्ताओं की एक कमेटी भी बना दी थी जो उनके पीछे से भी यह महान् कार्य करती रही।

शांति और क्रांति

विनोबा जी ने अपनी शांति यात्राओं से क्रांति का मार्ग बंद सा कर दिया था। उनके कुछ साथी बहुत खुश थे। और कुछ क्रांतिकारी उनसे बहुत ही चिढ़ गए थे। वे यह समझ रहे थे कि विनोबा हमारे रास्ते का सबसे बड़ा रोड़ा है। इन्होंने अपने भूदान से हमारी खूनी क्रांति को रोक दिया है। स्वयं विनोबा जी इस विषय में लिखते हैं कि—

उस दिन एक नौजवान मित्र ने मुझसे कहा, हमें आपका शांति शांति, शांति का नारा नहीं चाहिए। अब हमें क्रांति, क्रांति, क्रांति चाहिए।

मैंने उसे कहा कि यदि आप एक बार क्रांति कहेंगे तो ठीक

होगा। तीन बार नारा लगाने से तो आप मूल स्थान से भी पीछे हट जाएँगे। शांति को ऐसा कोई डर नहीं वह तो हमेशा के लिए पुरानी है। क्रांति पुरानी होने से बासी पड़ जाती है। इसलिए तीन बार कहने का कोई सार नहीं, बस एक ही बार क्रांति कहना चाहिए। फिर उसका नाम भी नहीं लेना चाहिए।

विनोबा जी ने अपने अनेक भाषणों, लेखों द्वारा साम्यवाद का पूरा-पूरा विरोध किया और अपने देश वासियों से निरंतर कहते रहे कि हमारे इन सब दुःखों का हल साम्यवाद अथवा खूनी क्रांति नहीं है। गांधीवाद में ही हर भारतीय के दुःखों का हल ढूँढ़ने का प्रयत्न करने से ही हम अपने देशवासियों को सुखी बना सकेंगे।

× × ×

दो वर्ष के पश्चात विनोबा जी बिहार भूदान के लिए गए। वहाँ पर भी उन्होंने गरीबों के लिए बहुत कार्य किए। गाँव-गाँव जाकर लोगों को प्रेरणा दी। उन्होंने हजारों गरीब किसानों को जमीन दिलाकर उनके लिए जीवन के नए मार्ग खोल दिए।

वास्तव में इस शांति और क्रांति कार्यक्रम के अंतर्गत विनोबा जी और साम्यवादियों में खुली टक्कर हो गई थी। उन्होंने हर स्थान पर खुले आम साम्यवादियों की आलोचना की उन्होंने खुलकर कहा कि—

"साम्यवादियों के लिए साम्यवाद अब एक जीवन दर्शन ही रह गया है। उसे उन्होंने केवल एक किताबी सिद्धान्त बना लिया है। आर्य समाजियों की भांति उन्होंने उस पुस्तक में अपने आप में बंद कर लिया है। यदि आज मार्क्स स्वयं जिंदा होते और वे भारत में होते। तो वे अवश्य ही अपने विचारों को बदल लेते। मैं भी कम्यूनिस्टों से कहता हूँ कि आप भले ही मार्क्सवादी होंगे पर स्वयं मार्क्सवादी नहीं थे। वे अपने आप को बदल भी सकते थे। भारतीय चिंतन का विकास दस हजार वष

पुराना है। कम्यूनिस्टों को इसका ज्ञान नहीं है। यही कमी है इन कम्यूनिस्टों में जो अपने देश को चिंतन ज्ञान से वंचित ही कर केवल एक ग्रन्थ के पुजारी बन गए हैं।

विनोबा जी के इन विचारों से भले ही कुछ लोग सहमत न भी हों किन्तु इस बात से तो कोई इनकार नहीं कर सकता कि साम्यवाद वास्तव में ही एक पुस्तक में बंद हो कर रह गया है। जबकि हमारी संस्कृति जो आज तक सारे संसार को मार्ग दर्शन दिखाती रही है। इस ग्रन्थ से बहुत ही भारी है। इस में हर चीज है मार्क्सवाद से भी कहीं अधिक हमारे प्राचीन ग्रन्थों में भरा पड़ा है। यही बात विनोबा साम्यवादियों से कहते थे।

पहली पंच वर्षीय योजना

पहली पंच वर्षीय योजना के मसविदे पर विनोबा जी के विचार जानने के लिए योजना आयोग के सदस्य श्री आर० के पाटिल 10 अगस्त 1951 को पनवार आए। तो विनोबा जी ने योजना की मोटी-मोटी रूपरेखा देखकर उसके मूलभूत उद्देश्यों पर विनोबा ने साफ-साफ निराशा प्रकट की। संविधान में तो आपने सभी नागरिकों को रोटी रोजी देने का आश्वसन दिया है परन्तु अब तो आपने इस आश्वासन को एक दम से भुला दिया है। आप पर यह जुम्मेवारी है कि सब को रोटी रोजी हो। यदि आप यह समझते हैं कि यह संभव नहीं है तो आपको त्याग पत्र दे देना चाहिए।"

इन शब्दों से आप विनोबा जी के बारे में स्वयं जान सकते हैं कि वे कितने बड़े स्पष्टवादी थे। उन्होंने सरकार पर खुला प्रहार

किया और जनता के हितों को सामने रखते हुए सरकार से गद्दी छोड़ने को भी कह दिया।

पं० जवाहर लाल जी ने जैसे ही विनोबा जी के विचार सुने तो उन्होंने यह महसूस किया कि विनोबा ठीक ही करते हैं फिर तेलंगाना में जाकर जो उन्होंने महान क्रांतिकारी कार्य किए हैं। उन्हें कैसे भुलाया जा सकता था, इसीलिए नेहरू जी ने विनोबा को दिल्ली बुलाया ताकि पहले पंचवर्षीय योजना उनके विचारों से सहमत होकर बनाई जा सके।

आपको यह पढ़कर आश्चर्य होगा कि विनोबा जी ने पनवार से दिल्ली तक आठ सौ मील (करीब 1250 कि०मी०) पैदल चलकर दिल्ली आने का निश्चय किया।

नेहरू जी ने जैसे ही उनका यह निर्णय सुना तो इस बात से बहुत ही चिंतित हुए कि विनोबा जी इतनी लम्बी दूरी पैदल चलकर तय करेंगे। किन्तु···

विनोबा जी का अपना ही आदर्श था, उन्होंने जो निर्णय किया था, उसके पीछे एक बहुत बड़ा उद्देश्य यह था कि पनवार से दिल्ली के रास्ते में जितने भी गाँव आएँगे, उनमें वे अपना भूदान कार्य भी करते जाएँगे और सर्वोदय का प्रचार भी।

पनवार से दिल्ली पहले सप्ताह की पद यात्रा में वे एक सौ दस मील चले और उन्हें दो हजार एकड़ जमीन मिली।

इसी बीच विनोबाजी ने जनता से यह अपील भी की कि सन् 1957 तक वे पाँच करोड़ एकड़ जमीन भूदान के रूप में लेकर गरीबों को बांटेंगे।

13 नवम्बर की यह लम्बी पद-यात्रा दो मास में पूरी करके विनोबा दिल्ली पहुँचे। इस यात्रा में उन्हें 19000 एकड़ जमीन और मिल गई थी। इस बार भी वे राजघाट पर उस छोटी सी कुटिया में ही ठहरे थे। यहीं पर उनसे मिलने के लिए राष्ट्रपति,

प्रधानमंत्री, और दूसरे बड़े-बड़े नेता, मंत्री, योजना आयोग के सदस्य उनसे विचार विमर्श के लिए आते रहे।

दिल्ली वासियों के सामने विनोबा जी ने अपने आप को पुराणिम वामन का नया अवतार बताया। वामनावतार ने तीन पाँव से सारी पृथ्वी को घेर लिया था। इसका उल्लेख करते हुए विनोबा ने कहा—

"मैं भी आपसे तीन कदमों की माँग करता हूँ।"

पहला कदम यह कि आप अपनी जमीन में से कुछ का त्याग करें।

दूसरा कदम यह कि आप अपने आपको गरीबों की सेवा में लगा दें।

तीसरा कदम यह कि गरीबों की सेवा में सब कुछ अर्पण कर दें।

ऐसे विचार उन्होंने लोगों के सामने रखे और साथ ही सरकार से भी यही कहा कि वे योजना में सबसे पहले गरीबों का ध्यान रखें देश से गरीबी दूर करना हमारा पहला कर्तव्य होना चाहिए।

भूदान आन्दोलन का प्रचार

दिल्ली से विनोबा जी उ० प्र० में अपनी नई पद-यात्रा पर निकले। इस यात्रा की मुख्यतः जिम्मेवारी बाबा राघवदास और गाँधी आश्रम के करण भाई ने उठाई थी।

उ० प्र० की इस महान् पद-यात्रा में विनोबा जी ने हजारों गरीब लोगों को ज़मीन का दान दिला कर उन्हें समाज में रहने

के योग्य बना दिया था। यदि देखा जाए तो इससे लाखों लोगों को एक नया जीवन मिला था। वे इस समाज में से ऊँच नीच और गरीबी को मिटाना चाहते थे।

यहाँ पर यह बात भी स्पष्ट कर दूं कि

"विनोबा जी अपने देश को खूनी क्रांति से बचाने चाहते थे।"

उन्हें यह बात पता थी कि साम्यवादी शक्तियाँ इस देश को अपने चंगुल में जकड़ने के लिए तैयार बैठी हैं।

इन पद-यात्राओं और भूदान से उन्होंने देश में आनेवाली खूनी क्रांति को तो रोका जैसाकि मेरे पाठक तेलंगाना की खूनी घटनाओं के बारे में भली-भाँति जान ही चुके हैं। यदि वहाँ पर विनोबा जी न जाते तो उस खूनी क्रांति का असर सारे देश पर पड़ सकता था।

उ० प्र० के पश्चात् विनोबा जी बिहार भू-दान के लिए गए। एक बात जो विशेष रूप से देखने में आई कि विनोबा जी जहाँ पर भी जाते वहीं पर सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को इकट्ठा करके उन्हें सर्वोदय संस्था का रूप देते।

इसी बीच यात्रा के बीच ही सेवापुरी में जो गाँधी स्मारक निधि और गाँधी आश्रम उ० प्र० का महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। यहीं पर 13 से 16 तक चौथा सर्वोदय सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में विनोबा जी ने सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं के सामने ऐतिहासिक भाषण किया। जिसमें उन्होंने सारे देश में जाकर जन सेवा की प्रेरणा दी।

इन यात्राओं में एक लाभ यह भी हुआ कि विनोबा जी के परिश्रम से गाँव वासियों में एक नई चेतना जागी। वे सबके सब अपने-अपने गाँव में नव निर्माण में जुट गए। हर स्थान पर ग्राम पंचायतें बनाई गईं। साथ ही छोटे-छोटे ग्राम उद्योग स्थापित किए गए।

विनोबा जी की इन पद-यात्राओं से सदियों से सोई हुई जनता

जैसे जाग उठी हो देश के हर गाँव में नई क्रांति की लहर आ रही थी। गाँव वासी विनोबा को भगवान् का रूप समझ रहे थे।

इन्हीं दिनों की एक घटना अपने पाठकों को सुनाता हूँ। यह घटना मंगरौठ गाँव की है। इस गाँव में 107 परिवार रहते थे। जिसकी कुल जनसंख्या 585 इनमें जमीन केवल 65 परिवारों के पास थी। भू-दान आन्दोलन से इस गाँव के सभी वासी ज़मीन वाले बन गए थे। यह थी शांति से क्रांति जिसने इस गाँव को कुछ ही वर्षों में आदर्श गाँव बना दिया जिसे सारे देश में उदाहरण के तौर पर पेश किया जा सकता है।

उ० प्र० की पद-यात्रा में 257 गाँव में विनोबा ने विश्राम किया। 3750 मील करीब (6000 कि० मी०) की पद-यात्रा करके 2,95,028 एकड़ जमीन प्राप्त की उस समय तक कुल चार लाख एकड़ ज़मीन भू-दान में ली जा चुकी थी।

इन्हीं दिनों सर्वोदय का पाँचवाँ सम्मेलन 7-8 और 9 मार्च को चंडीगढ़ में हुआ। इसमें भाग लेने वालों में प्रमुख थे राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद, रंगनाथ राव दिवाकर, काका साहब कालेलकर, जय प्रकाश नारायण, जोसी कुमारप्पा, शंकर राव देव, धीरेन्द्र मजूमदार, नवकृष्ण चौधरी आदि —

इसी सम्मेलन में देश के प्रसिद्ध समाजवादी नेता और पुराने क्रांतिकारी श्री जयप्रकाश नारायण जी ने घोषणा की थी कि वे अपना शेष सारा जीवन भूदान कार्य में ही लगाएँगे। यही विनोबा जी की ओर से देश को सबसे बड़ी देन थी।

इसके पश्चात् विनोबा जी फिर यात्रा पर निकल पड़े। इस बार उन्होंने अपना एक नया कार्यक्रम जोड़ दिया था। "श्रमदान" इस नए कार्यक्रम का आरंभ विनोबा जी ने थोड़ी सी मिट्टी खोद कर किया। इसका अर्थ था कि हर देशवासी अपनी इच्छा से हर रोज एक घंटा अपने देश को दें।

बिहार पद-यात्र की एक दुर्घटना मैं सुनाना जरूरी समझता हूँ। वह घटना इस प्रकार है।

वैद्यनाथ धाम को जो संथाल परगना में एक विशेष तीर्थ माना जाता है। इस मंदिर के बड़े महन्त ने विनोबा जी से प्रार्थना की कि वे हमारे इस ऐतिहासिक मंदिर में पधारें।

"विनोबा ने उस मंदिर में जाने के लिए शर्त रखी कि मेरे साथ हरिजन भगत भी आएँगे।" महंत ने उनकी इस शर्त को मान लिया।

जैसे ही शाम के समय विनोबा जी अपने साथियों के साथ उस मंदिर में गए, तो कुछ कट्टर पंथियों ने इनके प्रवेश का विरोध करते हुए उन पर लाठियों से हमला कर दिया। इस हमले में विनोबा जी के कान पर काफी चोट आई उनके कई साथी बुरी तरह घायल हो गए थे। इस पर भी विनोबा ने कहा कि—

> "जिन लोगों ने मुझ पर और मेरे साथियों पर यह हमला किया है। यह केवल उनकी अज्ञानता है। इसलिए मैं उन्हें कोई सजा नहीं दिलाना चाहता। हम पर जिस समय यह हमला हुआ। उस समय मुझे यह याद आया कि गाँधी जी पर इसी स्थान पर हमला हुआ था।"

विनोबा की इस शांति यात्रा और उन पर हुए हमले का यह परिणाम निकला कि यह मंदिर उस दिन के पश्चात् से ही सब वर्ग के लोगों के लिए खोल दिया गया।

बिहार यात्रा काफी लम्बी रही।

18,19,20 अप्रैल सन् 1954 में छठा सर्वोदय सम्मेलन बोध गया में हुआ। जिसमें पं० जवाहर लाल जी को विनोबा जी ने उसमें भाग लेने के लिए कहा।

पंडित नेहरू विनोबा की बात को कैसे टाल सकते थे। वे उस सम्मेलन में भाग लेने के लिए आए और उन्होंने सर्वोदय कार्य-

कर्त्ताओं के सामने अपना भाषण भी दिया। फिर उन्होंने एकांत में विनोबा जी के साथ लम्बी बात चीत की बाद में नेहरू जी सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं के सामूहिक भोजन में भी शामिल हुए।

बिहार की यात्रा में विनोबा 5000 पाँच हजार गाँव में गए पचास लाख लोगों ने उनके भाषण सुनें। इस यात्रा की एक विशेष घटना और सुनिए।

एक मुस्लिम जमींदार सुबह ही उनके पास आए। वे 5500 एकड़ जमीन पहले ही दे चुके थे। उस दिन 1500 एकड़ जमीन और दे गए। विनोबा ने कहा —

आपके पास जितनी परती की जमीन थी। वह तो आप सब दे चुके। अब आपके पास जितनी जमीन गैरकाश्त है उसका छठा हिस्सा मैं मांगता हूँ।

"मुस्लिम मित्र ने आदर से कहा। मुझे यह मंजूर है परन्तु मुस्लिम परिवारों में औरतें भी सम्पत्तियों की भागीदार होती हैं। हम पाँच भाई तथा दो बहनें हैं।"

तब मैं आपके परिवार का सदस्य बन जाता हूँ और मुझे आठवाँ हिस्सा दे दीजिए। विनोबा ने हँस कर कहा—

बड़ी खुशी की बात है। मुझे यह भी मंजूर है मुस्लिम नवाब ने खुशी से दान पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए और साथ ही बोला आपका यह मिशन इस्लाम के असूलों पर ही आधारित है। इस्लाम का यह आदेश है कि ऐसा दान देना कर्तव्य है। इसी तरह से विनोबा जी की उ० प्र० और बिहार की यात्रा सफलता पूर्ण समाप्त हो गई।

इस यात्रा का परिणाम विनोबा जी के आदर्शों की पूर्ति के लिए तो अच्छा निकला ही होगा किन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रहूँगा कि इन पद यात्राओं से देश में नई जगजागृति ने जन्म लिया। लोगों में देश भक्ति की प्रेरणा से ही आपसी प्यार बढ़ा,

जात-पात और नफरत की दीवारें टूटीं। शिक्षा का प्रचार हुआ। लोगों को ज्ञान मिला और हजारों बेजमीन लोगों को जमीन मिल गई।

"ऐसे लोग क्या विनोबा को भूल सकेंगे।"

देश भक्ति की भावना पैदा करना यही सबसे कठिन कार्य है, इस कार्य को गांधीजी के पश्चात् विनोबा जी ही पूरा कर रहे थे।

सफर जारी रहा

बिहार और उ० प्र० की यात्रा के पश्चात् विनोबा जी ने उड़ीसा और बंगाल की यात्रा आरंभ की।

बंगाल में उन्होंने पूरी पचीस दिन की यात्रा की इस यात्रा में उन्होंने बंगाल के बड़े-बड़े बुद्धि जीवियों, शिक्षकों सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं से भेंट की। इसी यात्रा में ही उनकी भेंट चारुचन्द्र भंडारी से हुई जो उनके साथ ही भूदान में लग गए।

बंगाल की यात्रा समाप्त कर विनोबा 21 मार्च को जगन्नाथ पुरी पहुँचे। उन्होंने उड़ीसा से भूदान कार्य आरंभ किया। यहाँ पर भी विनोबा जी का जनता की ओर से हार्दिक स्वागत किया गया।

उड़ीसा के गाँव-गाँव में जाकर विनोबा जी ने अपना कार्य आरंभ किया। यहीं पर से एक नई लोक लहर चली थी। "ग्राम-दान।"

कोरा पुर जिले में विनोबा करीब चार महीने रहे। उनके वहाँ रहने से ग्रामदान के काम को अच्छी गति मिल गई ग्रामदान के मुख्य असूल यह थे।

1. "गरीबी मिटाना।"

2. जमीन के मालिकों से प्रेम और स्नेह की भावना पैदा करना और इस प्रकार से देश के नैतिक वातावरण को सुधारना।

3. बड़े जमींदारों और किसानों में से नफरत की दीवारें हटाना।

4. यज्ञदान और तप से हमारे अनोखे तत्वज्ञान पर आधारित हमारी भारतीय संस्कृति पुनर्जीवित करके उसे बलवान बनाना।

5. आश्रम धर्म अपरिग्रह, सहकारिता, और स्वावलम्बन पर आधारित नई समाज रचना का निर्माण।

6. देश के सभी राजनैतिक दलों को एक मंच पर हिलमिल कर काम करने का अवसर।

7. जगातिक शांति में मदद पहुँचाना।

उड़ीसा की पद यात्रा की समाप्ति पर 812 गाँव की पदयात्रा करके 2,57,300 एकड़ जमीन भूदान में बांटी जा चुकी थी।

उड़ीसा यात्रा की समाप्ति पर उन्होंने कहा था कि—

उड़ीसा कि मेरी यात्रा ने चिंतन के नाम पर बहुत सी सामग्री दी है इससे मेरी भीतरी शक्ति को बल मिला है।

विनोबा जी का यह महान कार्य इतिहास में सदा स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा विश्व का यह पहला ही पद यात्री था जिसने संसार को एक ऐसा मार्ग दिखाया। जिस की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था, संसार में कितनी खूनी क्रांतियाँ हुई थीं मगर यह तो एक ऐसी क्रांति थी जो शांति से लाई जा रही थी, जो लोगों का मन जीतकर लाई जा रही थी।

वैसे तो भारत की धरती से आज तक सारे विश्व को ही नए-नए मार्ग दिखाए गए हैं। किन्तु विनोबा ने जो मार्ग इस संसार को दिखाया यह तो तप और त्याग का सबसे बड़ा मार्ग था मान-वता के बीच खड़ी नफरत की दीवारों का एक मात्र कारण यह

धरती और धन ही था। इसके बँटवारे से संसार के सारे झगड़े निपट जाएँगे।

"शांति, प्रेम अहिंसा।"

यही आदर्श लेकर चले थे विनोबा—

जब चले थे तो अकेले थे। जब आगे बढ़े तो कारवां बढ़ता गया। एक छोटे से गाँव से जलाई गई यह अमर ज्योति प्रकाश बनकर सारे देश में फैल गई। बड़े-बड़े नेता हैरान थे कि विनोबा जी ने कितना कठिन मार्ग अपने लिए चुना था।

उन्होंने अपना जीवन तो देश के लिए अपर्ण किया ही था। किन्तु इसके साथ-साथ उन्होंने अपने जीवन का हर सुख भी तो त्याग दिया। उनके मन में एक ही भावना थी एक ही इच्छा।

"इस देश का हर वासी सुखी रहे।"

"सब लोग प्यार से रहें।"

"नफरत की दीवारें टूट जाएँ और उनमें से जन्म ले।"

"प्रेम और भाईचारा मिलन।"

उड़ीसा की यात्रा के पश्चात् विनोबा जी के पवित्र चरण दक्षिण वासी भारतीयों की सेवा के लिए बढ़े और उन्होंने अपना यह महान् कार्य एक बार फिर से आरम्भ कर दिया। सेवा ग्राम आश्रम के पुराने कार्यकर्त्ता प्रभाकर जी इस सारी यात्रा में विनोबा जी के साथ रहे थे। दक्षिण की जनता के लिए विनोबा जी ने जो कुछ किया, उसे वह कभी नहीं भुला सकती विशेष रूप से वहाँ का पिछड़ा और निर्धन वर्ग।

जनवरी 1956 को विनोबा जी ने एक बार फिर से तेलंगाना में प्रवेश किया, इसी धरती पर पाँच वर्ष पूर्व भूदान का जन्म हुआ था। एक छोटी-सी चिंगारी जो शोलों का रूप धारण करके सारे देश में फैल गयी।

जिस समय विनोबा तेलंगाना पहुँचे होंगे वे भी तो एक बार

सोचते ही होंगे कि उन्होंने कभी एक सपना देखा था, वह केवल साकार नहीं हुआ बल्कि एक महान् आदर्श बन कर लोगों के सामने आया, आज देश के करोड़ों लोग इससे लाभ उठा चुके हैं, निर्धन, पिछड़ा वर्ग उन्हें भगवान् का रूप समझ कर पूज रहा है।

"एक लम्बी पदयात्रा।"

"साधारण आदमी तो इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता।" इतना बड़ा त्याग कौन करेगा ?

आंध्र प्रदेश में 63000 एकड़ जमीन प्राप्त करने के पश्चात् विनोबा जी ने तमिल नाडु में प्रवेश किया, उन्होंने मद्रास में अपने एक भाषण में कहा कि—

"सबसे पहले हम अपने आपको भारतीय समझें, जात-पात और संकीर्ण भावनाओं से हमें ऊँचा उठना है, भूदान प्रेम के सिवा और कोई भाषा नहीं जानता।"

उन्हीं दिनों सर्वोदय समाज का आठवाँ वार्षिक सम्मेलन मार्च के अन्तिम सप्ताह में कांचीपुरम में हुआ, उन्हीं दिनों देश के कई भागों में राज्यों के पुनर्गठन को लेकर उपद्रव हुए थे, इस विषय को सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं के सामने भाषण करते हुए विनोबा जी ने कहा—

"राज्यों के पुनर्गठन को लेकर देश में जो उपद्रव हुए हैं, उनसे मैं बहुत दुःखी हूँ, यह भूदान आन्दोलन की असफलता है, पिछले चार-पाँच वर्षों में पुलिस ने कई बार गोलियाँ चलाई हैं, यदि जनता द्वारा हिंसा होती है तो सरकार भी हिंसा से काम लेती है। यह बहुत बुरी बात है।"

"इस हिंसा के विरोध में विनोबा जी ने तीन दिन का उपवास भी रखा।" इस उपवास के पश्चात् वे एक बार फिर से भूदान आन्दोलन में जुट गए।

नवम्बर के पहले सप्ताह में विनोबा जी को तेज मलेरिया हो

गया इसलिए कुछ दिनों के लिए पदयात्रा को स्थगित करना पड़ा। जैसे ही उनका बुखार ठीक हुआ वे फिर पहले की भाँति अपनी पदयात्रा पर निकल पड़े।

"15 अप्रैल को विनोबा कन्याकुमारी पहुँच गए और सागर तट पर अपना पड़ाव डाल दिया, यहीं पर उन्होंने गंभीर प्रतिज्ञा की कि जब तक ग्रामदान का लक्ष्य पूरा नहीं हो जाता वे अपनी पदयात्रा को अखंड रूप से जारी रखेंगे।"

"भगवान् सूर्य नारायण को साक्षी रखकर हिन्द महासागर के तट पर देवी कन्याकुमारी के चरणों में आज मैं गम्भीर प्रतिज्ञा करता हूं कि भारत में जब तक ग्राम स्वराज्य की स्थापना नहीं हो जाती मैं अपनी यात्रा जारी रखूंगा, इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए भगवान् मुझे बल दें।"

इसके पश्चात् आरम्भ हुई केरल की यात्रा।

18 अप्रैल सन् 1957 को परसाला में, केरल के साम्यवादी मुख्यमन्त्री श्री नम्बूदरी पाद और राज्यपाल रामकृष्ण राव ने किया, इस अवसर पर केरल वासियों को विनोबा जी ने कहा।

> "केरल की भूमि और उसकी जनता में एक विशेषता है, इस प्रदेश में अनेक राजनैतिक दल हैं, सबकी राय यही है कि जितनी भी जल्दी हो सके, राज्य में जमीन का स्वामित्व समाप्त हो जाना चाहिए, इसलिए यहां पर एक कारगर परिवर्तन आसानी से किया जा सकता है, इसलिए आइए हम सब मिलकर आगे बढ़ें।"

इस तरह से विनोबा स्वयं केरल में आगे बढ़े और अपना भूदान कार्य आरम्भ किया, इस वर्ष ही वे सर्वोदय समाज का वार्षिक सम्मेलन आदि शंकराचार्य के जन्म स्थान कालड़ी में 7 से 10 मई तक हुआ, इस सम्मेलन के अध्यक्ष थे प्रसिद्ध सर्वोदय नेता दादा धर्माधिकारी, इस सम्मेलन में बोलते हुए विनोबा ने कहा।

"ग्रामदान का अर्थ है, साम्ययोग अथवा समविभाग परन्तु हमें याद रखना चाहिए कि यह समता कठोर हृदय से लायी जा सकती। हार्दिक करुणा के बगैर की गई समता है, ग्राम दान का अर्थ है,व्यक्ति और समष्टि का पारस्परिक तादात्म्य, ग्रामदान में जमीन के मालिक जमीन देते हैं, मजदूर श्रम देते हैं और बुद्धिमान बुद्धि का दान करते हैं, इसलिए सम्पूर्ण ग्राम दान का गुरु मंत्र है।"

"ग्रामदान में कितने गाँव मिलते हैं, इसकी मुझे परवाह नहीं मेरे लिए तो मुख्य वस्तु है, कार्यकर्त्ता, सही ढंग के कितने कार्यकर्त्ता आगे आते हैं और निष्ठा के साथ काम में लग जाते हैं। यही मुख्य प्रश्न है, भूदान उच्च कोटि के निष्ठावलि कार्यकर्त्ता माँगता है, वे ही स्वतन्त्र और समता युक्त समाज का निर्माण कर सकेंगे।"

अपने भाषण में विनोबा जी ने शांति सेना की स्थापना पर भी जोर डाला, उन्होंने कहा कि गाँधीजी चाहते थे कि देश में शान्ति सेना होनी चाहिए, आप सब मिल कर गाँधी जी के सपनों को पूरा करें।

24 अगस्त को केरल की यात्रा समाप्त करते हुए उन्होंने कर्नाटक राज्य में प्रवेश किया। कर्नाटक प्रदेश में सबसे पहला भाषण विनोबा ने जो दिया उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं।

"भूदान और जमीन के स्वामित्व की समाप्ति से अब हम ग्राम दान और शांति सेवा तक आ पहुँचे हैं, अब मैं चाहता हूँ कि कर्नाटक बताए कि सर्वोदय समाज क्या होता है, कर्नाटक के लोग समवन्य को कला जानते हैं। आज हमारा समाज वंश, जात-पात रंग, धर्म और राजनैतिक विचारों जैसे असंख्य टुकड़ों में छिन्न-भिन्न हो रहा है, अब अगर स्वराज्य को जिन्दा रहना है तो हमें अपने समाज को एक जीव कहना

होगा ।"

इन विचारों से आप विनोबा जी के मन में उन आशंकाओं को अच्छी तरह जान सकते हैं, उन्हें देश में उठती हुई साम्प्रदायिकता की लहर के साथ-साथ प्रांत्यवाद जात-पात साफ नजर आ रहे थे। उन्हें यह नजर आ रहा था कि भारतवासी एक बार फिर भटक रहे हैं । इस देश के लोगों को सबसे पहले भारतीय होना चाहिए, यही भावना हम पैदा नहीं कर सके, मैं अपने देश वासियों को यह बात बता देना जरूरी समझता हूँ कि हमारे देश का नाम "भारत" है और इसमें रहने वाले सभी भारतवासी । यही हमारा कर्त्तव्य है, यही सरकार की जिम्मेदारी है ।

किन्तु,

आज भारतवर्ष में एक भयंकर संकट पैदा होता नजर आ रहा है। हमारा यह सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि हम केवल अपने वोटों के लिए ही देश में घृणा का वातावरण पैदा करते जा रहे हैं। देश के स्वार्थी नेता अपनी नेतागीरी के लिए जनता में फूट का जहर पैदा कर रहे हैं । यह ऐसा जहर है, जो अन्दर ही अन्दर हमें खोखला कर देगा, हमारी देश की आजादी के लिए यह भयंकर खतरा है । इसी खतरे का एहसास हो चुका है विनोबा जी को ।

मगर मैं समझता हूँ कि हमारे राजनैतिक नेता वोटों पदों और मन्त्री बनने के चक्कर में सब कुछ भूल चुके हैं। देश में आज चारों ओर यह जहर फैल रहा है, स्वार्थी नेताओं ने गाँधी जी की शिक्षा को तो भुलाया ही था, किन्तु ऐसा नजर आ रहा है कि वे विनोबा जी के तप और त्याग को देख कर कुछ नहीं सीख सके। विनोबा जी जैसे लोगों की देश को बहुत जरूरत है, क्यों नहीं ऐसा त्याग करते हमारे नेता ? मैं समझता हूँ कि मुझे ऐसा पूछने का कोई अधिकार तो नहीं मगर मैं जब विनोबा जी को एक महान् संत के रूप में संसार के सामने पेश कर रहा हूँ तो मैं उस

संत की ओर से ही यह पूछने का अधिकार रखता हूँ।

मुझे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए, मैं केवल इस देश के लिए ही यह सब चाहता हूँ। विनोबा जी के आदर्शों के लिए अपने देश के लिए आज हम एक बार फिर उस भाग के पहाड़ पर खड़े हैं। जो हम ने सन् 1947 के बंटवारे के भंयकर रूप में देखा था। विनोबा जी ने ठीक सोचा था कि यह काम सरकार नहीं कर सकती। यह तो हमें स्वयं करना चाहिए जनता के सहयोग से।

इस सहयोग को पाने के लिए ही तो विनोबा देश भर में पद-यात्रा कर रहे थे। मैसूर से नौ मील की दूरी पर येलवाल में एक ऐतिहासिक ग्राम दान परिषद् ता० 21,22 सितम्बर सन् 1957 को हुई। सर्वसेवा संघ के तत्कालीन अध्यक्ष धीरेन्द्र मजुमदार ने उसका संयोजन किया। उसमें भाग लेने वालों में देश के सभी बड़े नेता जवाहरलाल जी नेहरू, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, गोविन्द बल्लभ पंत, जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, यू०ए० ढ़ेबर, एस० के० डे०, नम्बूदरीपाद, सुचेताकृपलानी, जैड०ए० अहमद थे। इस सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए विनोबा जी ने कहा कि—

> "मनुष्य की स्वाभाविक अच्छाई में मेरा पूरा विश्वास है। ऊपर-ऊपर भले ही उसमें कुछ कमजोरियाँ हों। परन्तु मूलतः वह अच्छे गुणों से भरा हुआ है। उनको अनेक प्रकार से प्रकाश में लाया जा सकता है। ईश्वर की कृपा से भू-दान आन्दोलन में इस अच्छाई को देख सका।"

पिछले कुछ वर्षों से देश के विभिन्न भागों में मुझे भू-दान में जमीन मिलती रही है। इस संस्था को शांति और अहिंसा से सुल-झाने के लिए नया वातावरण निर्माण हो गया है। गाँधी जी हमेशा हमें प्रेम और शांति का रास्ता बताते रहे। आज संसार हिंसा से ऊब गया है। उसे सूझ नहीं रहा कि क्या किया जाए। शस्त्रास्त्रों के अम्बार खड़े हो गए हैं। परन्तु इनसे हमारी समस्याएँ कभी

हल नहीं हो सकती । गांधी जी ने हमारे सामने "ट्रस्टीशिप" थातीदार का सिद्धांत रखा । कुछ लोगों का विचार है कि भू-दान और ग्राम-दान के आन्दोलन ट्रस्टीशिप के सिद्धांतों के विरुद्ध पड़ते हैं। इसलिए ट्रस्टीशिप के बारे में अपने विचार साफ कर देना चाहता हूँ । माता-पिता अपने बच्चों के ट्रस्टी होते हैं । ट्रस्टीशिप का इससे बड़ा उदाहरण नहीं मिल सकता । माता-पिता खुद अपने से भी अधिक चिंता अपने बच्चों की करते हैं । वे हर समय यही प्रयत्न करते हैं कि जितनी भी जल्दी हो सके वे अपने बच्चों को इस तरह से प्रशिक्षण दें कि वे अपनी जिम्मेवारी को जितनी जल्दी संभव हो सके अच्छी तरह संभाल लें । ग्राम-दान के आन्दोलन में शुरू से ही यही भावना काम कर रही है ।

"एक आक्षेप यह भी है कि इस आन्दोलन के द्वारा मैं जमीन के और छोटे-छोटे टुकड़े कर रहा हूँ । परन्तु असल बात तो यह है कि मुझे जमीन के टुकड़ों की अपेक्षा दिलों के टुकड़े-टुकड़े होने की अधिक चिंता है । मैं लोगों के दिलों को जोड़ने का अपनी शक्ति भर प्रयत्न कर रहा हूँ । यदि यह बन गया तो दूसरी सारी बातें अपने आप हो जाएँगी ।"

विनोबा जी का यह भाषण तो बहुत लम्बा था। मैंने उस भाषण का मुख्य उद्देश्य बता दिया है। इससे आप यह जान सकते हैं कि उनके मन में क्या था ।

इसी सम्मेलन में नेहरू जी ने ग्राम-दान आन्दोलन की प्रशंसा करते हुए उन्हें पूरा सहयोग देने का विश्वास दिलाया। इनके साथ ही साम्यवादी और समाजवादी नेताओं ने भी ग्राम-दान आन्दोलन की खुलकर प्रशंसा की ।

इस सम्मेलन में भाग लेने वाले सभी नेताओं ने विनोबा जी क ग्रामदान भूदान आन्दोलन को देश के हित में बताते हुए उनके इस महात्याग की खुल कर सराहना की ।

येलवाल सम्मेलन सर्वोदय के आदर्शों के लिए एक ऐतिहासिक सम्मेलन माना जाता है।

इसके साथ ही साथ विनोबा जी ने कर्नाटक में अपना कार्य और तेज कर दिया था।

धर्म क्रांति

दक्षिण भारत की पद-यात्रा के पश्चात् विनोबा वापस महाराष्ट्र और गुजरात आ गए। इन क्षेत्रों में भी उन्होंने अपनी पदयात्रा के साथ भू-दान ग्राम-दान का कार्य जारी रखा।

इन्हीं दिनों सन् 1958 मई के अंतिम सप्ताह में अखिल भारतीय सर्वोदय समाज का दसवां सम्मेलन होने जा रहा था।वहाँ के प्रसिद्ध विनोबा मंदिर के ट्रस्टियों ने विनोबा जी को अपने साथियों को साथ लेकर मंदिर में आने की प्रार्थना की।

उनकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए विनोबा अपने साथियों को लेकर उस मंदिर में गए। इनमें एक जर्मन महिला एक मुस्लिम कार्यकर्ता एक पारसी युवक और कुछ हरिजन थे। यह इस मंदिर के इतिहास में पहला अवसर था। जब यह हिन्दू मंदिर दूसरे धर्म वालों के लिए खुला था। विनोबा ने कहा—

"मेरे लिए आज यह बहुत बड़ा दिन है। इस शुभ घटना का मेरे मन और हृदय पर बहुत गहरा असर पड़ा है। जब मैं भगवान् की मूर्ति के सामने आकर खड़ा हुआ और पूजा के लिए झुका तो मैं भाव भिवोर हो गया। आज महाराष्ट्र ने मुझे सबसे बड़ी चीज दी है। सर्वोदय की प्रगति में यह एक महत्त्वपूर्ण घटना है।"

इस लम्बी यात्रा में वे धुलिया जेल में गए वहाँ पर उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में जेल काटी और साथ ही गीता प्रवचन माला आरंभ की थी।

फिर बड़ौदा आए यहाँ पर उन्होंने अपना बचपन व्यतीत किया था। यहीं पर वे प्रसिद्ध साहित्यिकों से भी मिले उन से कहा कि—

सच्चा साहित्य वह है जो सब के दिलों को हिला देता है। जो सब में नया प्राण डालता है। सबको नई प्रेरणा देता है।

"जो साहित्य केवल कुछ लोगों तक ही अपने को सीमित कर दे वह किसी काम का नहीं।"

बड़ौदा से वे फिर आगे बढ़े और गुजरात के सौराष्ट्र वाले भाग में जाकर अपना आन्दोलन जारी रखा।

सन 1958 दिसम्बर के मध्य विनोबा जी अहमदाबाद पहुँचे। कुछ दिन के पश्चात गंगाड के स्थान पर पं० नेहरू किसी जरूरी विषय में विनोबा जी से सलाह लेने अपनी कार से आए उन्होंने सुबह की पदयात्रा में भी भाग लिया नेहरू जी विनोबा जी के साथ दो मील पैदल चले। उन्होंने कहा कि—

"विनोबा इस भारत भूमि के महान पुत्रों में से एक हैं। आज सारे संसार में एक और अणु बमों का भंयकर भंडार भरा पड़ा है मानवता इस बोझ के नीचे दबती जा रही है।"

दूसरी ओर विनोबा जी हैं जो गाँव-गाँव में पैदल जा कर करोड़ों देश वासियों को शांति का संदेश सुना रहे हैं।

गुजरात और महाराष्ट्र की यात्रा के पश्चात विनोबा ने राजस्थान में प्रवेश किया। यह जनवरी सन 1959 की बात है जब उन्होंने भारत के इस महान वीरों की धरती पर पद यात्रा आरंभ की और वहाँ पर भूदान और ग्रामदान का महान कार्य आरंभ किया।

राजस्थान की सफल पदयात्रा के पश्चात् 1 अप्रैल सन 1959 को विनोबा जी ने पंजाब में प्रवेश किया और वहाँ पर भी अपना काम जोरों से किया। इस यात्रा के बीच ही विनोबा ने भाखड़ा डैम भी देखा। इसे देखकर उन्होंने यह शब्द कहे कि पं० नेहरू की यह योजनाएँ नए मंदिर हैं।

यदि इनसे सींची गई जमीन का छठा हिस्सा भी बेजमीन गरीबों को दे दिया जाय तो सोलह हजार परिवारों की रोटी-रोजी का प्रबन्ध हो सकता है।

होशियारपुर में उनसे शिरोमणी अकाली दल के प्रतिनिधि मिलने आए तो उन्होंने इन्हें यह सलाह दी कि वे लोग अपने "संगठन के चुनाव करना बंद कर दें और सर्व सम्मति से काम करने की पद्धति आरंभ करें।

गुरु हरि की पवित्र सीमा में जब आप लोग प्रवेश करें तब राजनैतिक दलरूपी जूतों को बाहर छोड़ दें।

22 सितम्बर को पठानकोट में नए संगठन "सर्वसेवा संघ" की पहली बैठक हुई जिसमें अध्यक्ष बल्लभ स्वामी थे। अखिल भारतीय शांति सेना मंडल की स्थापना वहीं हुई। जयप्रकाश नारायण जी को शांति सेना का सभापति चुना गया।

यहीं से उन्होंने हिमाचल प्रदेश में प्रवेश करके अपना भूदान कार्य इस पहाड़ी राज्य में जारी रखा।

हिमालय की वापसी पर वे फिर अमृतसर आए यहीं अपनी इसी पद यात्रा में उन्होंने जिला करनाल के गाँव पट्टी-पट्टी कल्याण में पं० नेहरू से भेंट की थी। इस भेंट में उन्होंने देश और विदेशों की राजनैतिक स्थिति के बारे में खुल कर बातचीत की।

दोनों नेता एक लम्बे समय के पश्चात मिले थे विनोबा जी के इस महान त्याग से पं० नेहरू बहुत ही प्रभावित थे। उन्होंने भी विनोबा को महात्यागी महान संत कहा था।

कश्मीर की वादियां

जब भी कहीं पर कश्मीर का ज़िक्र आता है तो लोग ऐसा महसूस करते हैं जैसे पहाड़ों पर घूमने जा रहे हों। कश्मीर की बात ऐसी है, मगर जब मैं कश्मीर के साथ विनोबा जी का नाम जोड़ने लगता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि मैं एक नई अग्नि परीक्षा की बात करने जा रहा हूँ।

वैसे तो हमारे इतिहास में एक से एक बढ़कर तपस्वी और त्यागी, साधु, ऋषी, मुनि पैदा हुए हैं। जिन्होंने पूरा जीवन ही तप करने में व्यतीत किया वे प्रभु भक्ति में खोए पहाड़ी पर ही पड़े रहे।

लेकिन विनोबा तो इस संसार के सबसे बड़े मानव कल्याण के संत थे। जिन्होंने अपने जीवन में अधिक से अधिक लम्बी पद



"कश्मीर की पद यात्रा पर गए विनोबा जी
जो कठिन पहाड़ियों पर चढ़ते उतरते दिखायी दे रहे हैं।"

यात्राएँ करके संत मत के इतिहास को एक नया मोड़ तो दिया साथ ही विश्व राजनीति को भी एक ऐसा मोड़ दिया जिसका उत्तर इतिहास सदियों तक नहीं कर सकेगा।

इस महान संत के जीवन में ईश्वर भक्ति से बड़ी भक्ति जुड़ी हुई थी वह थी।

"मानवता की भक्ति।"

मानव कल्याण जिसका सीधा अर्थ यही था कि इस देश में से गरीबी मिटाई जाए।

इस महान आदर्श को लेकर वे गए थे कश्मीर में अब आप स्वंय सोचें कि कश्मीर की बर्फीली पहाड़ियों पर इस तपस्वी इन्सान ने कैसे पद यात्रा की होगी।

हम भारतवासी पश्चिमी सभ्यता की ओर बढ़ते जा रहे हैं। हम विदेशी साहित्य अधिक पढ़ने की बातें सोचते हैं। विदेशी जीवन हमें अच्छा लगने लगा।

वह सब केवल बड़े शहरों में होती है। क्या यह गिनती के शहर भारत में।

नहीं असली भारत तो देखा विनोबा जी ने उन्होंने कन्या कुमारी से लेकर कश्मीर तक के बसे असली भारत को देखा। वे भी पैदल चलकर उनके दुःख सुने उनकी कठिनाइयों को दूर करने के प्रयत्न भी किए।

उन्होंने कश्मीर में भी ऊँची पहाड़ियों पर चढ़कर वहाँ के लोगों को सर्वोदय का भूदान और ग्रामदान का संदेश सुनाया चित्र से आप भली भाँति अंदाजा लगा सकते हैं कि कश्मीर के लोगों ने कितना दिल खोलकर स्वागत किया।

कश्मीर की इन ऊँची पहाड़ियों से ही उन्होंने अपना यह संदेश सुनाया कि—

"मजहब और राजनीति के दिन बीत गए। अब तो विज्ञान



और आत्म विज्ञान का युग आया है। विज्ञान ने आदमी को इतनी शक्ति प्रदान कर दी है कि वह घर बैठे-बैठे सारे संसार को समाप्त कर सकता है। अब आपको ऐसी शक्ति का पता लगाना है। जो घर पर बैठे-बैठे सारे संसार में शांति स्थापित कर सके। यह शक्ति केवल आध्यात्मिक ही हो सकती है।"

कश्मीर यात्रा समाप्त करने से पहले ही उन्हें चम्बल के डाकू तहसीलदार सिंह का एक पत्र मिला। यह मशहूर डाकू मानसिंह का लड़का था। उसने लिखा था कि—

"मुझे फांसी की सजा सुना दी गई है। मगर मैं फाँसी पर लटकने से पहले आपके दर्शन करना चाहता हूँ।"

इसके साथ ही उन्हें यह सूचना मिली थी कि चम्बल के कुछ

डाकू उनसे मिलकर आत्म सम्पंण करना चाहते हैं।

"डाकुओं का सुधार यदि शांति सें होता है तो यह भी मेरा सौभाग्य ही होगा।"

यही सोचकर विनोबा जी ने चम्बल घाटी जाने का निश्चय किया जो उस समय डाकुओं का सबसे बड़ा गढ़ माना जाता था।

7 मई सन् 1960 को अपने इस शांति कार्य को आरंभ करते हुए विनोबा जी ने चम्बल की घाटियों में प्रवेश किया। प्रार्थना सभा के पश्चात् अपने पहले भाषण में उन्होंने कहा—

डाकू कौन हैं ?

कुछ लोग डाकू के नाम से बदनाम हैं। परन्तु अकेले वे ही डाकू हैं यह बात नहीं है। भगवान् की नजरों में कुछ दूसरे आदमी इन डाकुओं से भी अधिक अपराधी हो सकते हैं। कुछ लोग आशा करते हैं कि मैं डाकुओं की समस्या हल करने जा रहा हूँ। पर बात बिलकुल दूसरी है। मैं इन समस्याओं का हल करने वाला कौन हूँ मैं तो भगवान् का एक तुच्छ सेवक हूँ। जो भले आदमियों की सेवा के लिए गाँव-गाँव घूम रहा हूँ। मैं तो बुद्ध और ईसा के चरण चिन्हों पर चलने का प्रयत्न कर रहा हूँ। मेरी तो एक ही इच्छा है कि आज करुणा की जीन सूखी पड़ी है। वह फिर से बहने लगे।

विनोबा जी ने यह तो सुन रखा था कि आज से 2500 वर्ष पहले एक डाकू ने महात्मा बुद्ध के सामने आत्म सम्पर्ण किया था इसलिए वे इस धरती पर आए थे। उनकी इस योजना को सुनकर सबसे पहले डाकू लच्छी ने आकर आत्म सम्पर्ण कर दिया।

उसने कहा था कि मैंने आपकी सारी योजना बम्बई में पढ़ी थी। इसलिए मैं बम्बई से आत्म सम्पर्ण करने के लिए आपके पास आया हूँ।

विनोबा उस डाकू के मुँह से यह शब्द सुनकर बहुत ही खुश हुए। वास्तव में ही उन्हें आज से 2500 सौ वर्ष पूर्व की घटना याद

आ गई जब डाकू अंगुलिमाल भगवान् बुद्ध की कृपा से साधु बन गया था।

बस यहीं से चला था डाकुओं के आत्म सम्पर्ण का यह सिल-सिला।

19 मई को इस घाटी के 11 डाकुओं ने विनोबा जी के सामने आकर अपने हथियार फेंक दिए और स्वयं को कानून के हवाले कर दिया।

इस प्रकार से चम्बल के डाकू विनोबा जी के चरणों में बारी-बारी आकर हथियार फेंकने लगे और उनकी प्रार्थना सभाओं में भी भाग लेने लगे।

चम्बल घाटी की यह सबसे जटिल समस्या जो गोलियों से न सुलझाई जा सकी थी। उसे विनोबा जी ने शांति और प्रेम से सुलझा कर विश्व की खूनी धारा को जो एक नया मोड़ दिया उसे कौन भूल सकता है।

नफरत को प्रेम से जीता जा सकता है। यही एक उदाहरण हमारे सामने पेश किया विनोबा ने महात्मा बुद्ध ने तो केवल एक डाकू का जीवन बदला था। मगर विनोबा जी ने तो सैंकडों डाकुओं का जीवन बदल दिया था।

हिंसा ने अहिंसा के हाथों मार खाई थी।

इस सारे कार्य में विनोबा जी के साथी मेजर जनरल यदुनाथ सिंह जी रहे। डाकू समस्या के हल में उन्होंने पूरी-पूरी सहायता दी थी। विशेष रूप से डाकुओं को फिर से बसाने का सारा काम विनोबा ने मेजर जनरल यदुनाथ सिंह को ही सौंप दिया था।

किन्तु यह कितने दुर्भाग्य की बात हुई कि अगस्त सन् 1960 में मेजर साहब की मृत्यु हो गई। इस से विनोबा जी को हार्दिक दुःख हुआ।

× × ×

चम्बल घाटी की लाभकारी यात्रा के पश्चात् विनोबा जी पूर्व भारत की ओर चले। राजस्थान से होते हुए वे इन्दौर पहुँचे तो वहाँ पर उन्होंने शहर की गली-गली में पहुँच लोगों को सर्वोदय का आदर्श समझाया। उन्होंने इन्दौर वासियों से यह अपील की कि वे इन्दौर को सर्वोदय नगर का रूप दे दें।

इसी बीच उन्हें यह सूचना मिली कि आसाम में भाषा के प्रश्न को लेकर दंगे हो गए हैं। इन दंगों की रोक थाम के लिए उन्हें अपने सारे कार्य स्थगित करके आसाम जाना पड़ा। इन झगडों से पं० नेहरू स्वयं बहुत दुःखी हुए थे। उन्होंने भी विनोबा जी को एक पत्र लिखकर उन्हें आसाम जाकर सरकार की सहायता करने के लिए कहा।

विनोबा इस से पहले आसाम नहीं गए थे। हालांकि उन्होंने कई बार सोचा भी था। किन्तु यह भी अजीब संयोग की बात थी कि उन्हें ऐसे अवसर पर ही आसाम जाना पड़ा। जब वहाँ के लोग भाषा के प्रश्न को लेकर आपस में लड़ रहे थे।

5 मार्च 1961 को विनोबा जी आसाम के ग्वालपाड़ा जिले में पहुँचे। उन्होंने अपनी पहली प्रार्थना सभा में ही लोगों को समझाते हुए कहा कि—

भाषा के प्रश्न को लेकर हमें एक दूसरे से घृणा नहीं करनी चाहिए। भाषा तो एक विद्या है। संसार की कोई विद्या बड़ी नहीं होती। हर विद्या से ज्ञान बढ़ता है।

इस प्रकार से विनोबा आसाम के गाँव-गाँव शहर-शहर में घूमे वहाँ के लोगों के दिलों से नफरत की आग को ठंडा कर प्रेम के दीपक जलाए।

उन्होंने अपनी इस पद यात्रा में आसाम के बुद्धि जीवियों को भी सम्बोधित किया। उनसे भी उन्होंने यही अपील की कि वे जनता को शांति पूर्ण रहने का रास्ता बताएँ। उन्होंने कहा कि—

लेखक के पास जनता के हृदय तक पहुँचने की शक्ति होनी चाहिए। यह केवल अहिंसा के द्वारा ही होता है जो सच्ची कला की जननी है।

इस तरह से उन्होंने आसाम के लोगों के मन जीत लिए वहाँ पर कई स्थानों पर सर्वोदय समाज की शाखाएँ खोली गईं। हजारों आसामी कार्यकर्त्ता सर्वोदय के काम में जुट गए।

आसाम में विनोबा जी अठारह मास डेढ़ वर्ष तक रहे। आसाम से वापसी पर विनोबा जी पाकिस्तान के उस भाग में गए जो बंगाल के बंटवारे के पश्चात् पाकिस्तान के हिस्से में आया। उसे पाकिस्तान कहते थे (आज उसका नाम बंगला देश है) जो पूर्ण स्वतंत्र है।

सानेर हाट की एक विशाल सभा में उन्होंने कहा कि—

"मुझे तो यहाँ पर आकर दोनों देशों में कोई फर्क नजर नहीं आता। वही लोग, वैसे ही लिवास मुझे तो भारत और पाकिस्तान में कोई फर्क नजर नहीं आता। मैं तो कहता हूँ जय जगत, असल में सारा जगत मेरा घर है।"

इन्हीं दिनों विनोबा जी का सड़सठवाँ जन्म दिन था। जो उन्होंने अपने देश से बाहर अपने लाखों श्रद्धालुओं के बीच में खुशी-खुशी मनाया। उन्होंने वहाँ के मुसलमान भाइयों को कुरान पाक की आयतें सुना-सुनाकर उनके मन तो जीत ही लिए थे। साथ में यह भी सिद्ध कर दिया था कि धर्म का झगड़ा कोई झगड़ा ही नहीं। यह तो सब स्वार्थी लोगों की पैदा की हुई समस्या है।

पूरी मानवता एक है। सबसे बड़ा धर्म ही मानवता है। उन्होंने कहा कि—

संसार के अंदर बहुत सी जातियाँ और भाषाएँ हैं और धर्म हैं। परन्तु इस अनेकता के अन्दर भी एकता बसी हुई है। सब जगह मनुष्य की आदर्श और आकांक्षाएँ एक सी हैं। इसलिए इन

सब को एक कुटुम्ब की भाँति ही मिलकर रहना चाहिए। ऐसा करने से सारा संसार एक हो सकता है।

चीनी आक्रमण और विनोबा

इन्हीं दिनों, जब विनोबा जी पश्चिमी बंगाल की पद यात्रा पर थे, तो चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया। ऐसे मौके पर उन्होंने कहा था कि—

हमला करने वाले इन्सान नहीं हैं वे तो एक यंत्र के पुर्जे हैं। ऐसे लोग अपने पीछे बैठे मालिकों के इशारों पर कठपुतलियों की भांति नाचते हैं। युद्ध कोई अच्छी बात नहीं किन्तु हमला करने वाले शत्रु का मुकाबला न करना भी अच्छी बात नहीं इसलिए सरकार को दृढ़ता से चीनी हमले का मुकाबला करना चाहिए। हाँ, एक बात याद रखने की है हमें चीनी जनता के बारे में घृणा नहीं रखनी चाहिए क्योंकि वहाँ की जनता युद्ध नहीं चाहती। मैं समझता हूँ कि विश्व के किसी देश को जनता युद्ध नहीं चाहतो यह काम तो केवल वहाँ स्वार्थी शासक ही करते हैं।

चीनी युद्ध समाप्त हो गया। दोनों देशों ने अपनी-अपनी इच्छा से युद्ध बंद कर दिया था।

विनोबा जी ने बंगाल में अपनी पद यात्रा द्वारा हजारों गरीबों को जमीन बाँटने का महान कार्य करके इस क्रांतिकारियों के सबसे बड़े गढ़ में शांति द्वारा लोगों के मन जीतकर गरीबी दूर करने का रास्ता निकालकर दिखा दिया।

"इस अहिंसा के पुजारी के पाँव नहीं रुके।"

"वे अपने कर्तव्य का पालन करने से नहीं रुके।"

"उनका सफर जारी रहा"

अपनी इस पद यात्रा से वे दो काम कर रहे थे।

"एक तो गरीबी को दूर करना"

दूसरा, लोगों का यह बताना कि अपने देश के हित के लिए तप त्याग करके उसे एकता के धागे में कैसे पिरोया जा सकता है।

इन्हीं दिनों विनोबा जी को एक बहुत दुःख भरा समाचार मिला—वह था। उनके सबसे बड़े मित्र इस देश के सबसे बड़े ईमानदार और देश भक्त नेता।

"पं० जवाहरलाल जी की मृत्यु।"

जिससे विनोबा जी अत्यंत चिंतित हुए।

फिर पनवार आश्रम में

विनोबा जी शराब को सबसे बुरा समझते थे। उन्होंने सरकार से कई बार अनुरोध किया कि वे सारे देश में ही शराब बंद कर दे। यही सब बुराइयों की जड़ है।

सारे देश की यात्रा करते हुए विनोबा जी पूरे तेरह वर्ष के पश्चात् वापस पनवार आश्रम पहुँचे। उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था कि मैंने केवल तीन संस्थाएँ आरंभ की हैं।

(1) "बड़ौदा का मंत्री मंडल"

(2) "नाल बाड़ी का ग्राम सेवा"

(3) "सेवा मंडल और पनवार का ब्रह्म विद्या मन्दिर"

इस मन्दिर में विनोबा जी के छोटे भाई बालकोवा जी वर्ष में छह महीने यहाँ आकर रहा करते थे। यहीं पर सब धर्मों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था थी। राष्ट्र भाषा हिन्दी

के प्रचार के साथ-साथ देश को अन्य सभी भाषाओं को इस आश्रम में पढ़ाया जाता था। विनोबा चाहते थे।

मैं चाहता हूँ कि पनवार अहिंसा का शक्ति गृह बन जाए। (पावरहाऊस) यह सब धर्मों का मिलन स्थान हो। इस संस्था को चारों ओर प्रकाश फैलाते रहना चाहिए—उन्होंने आगे कहा।



विनोबा जी पनवार आश्रम में काम करते हुए

आजकल ऑल इंडिया रेडियो के कितने ही दूर प्रसारण केन्द्र हैं मैं चाहता हूँ कि पनवार अंतर का गहर चिंतन प्रवर्तन केन्द्र हो और वह लोगों के हृदय और मनों को बल प्रदान करे।

इन विचारों से आप पनवार आश्रम के बारे में यह भली भाँति जान सकते हैं कि उनके मन में पनवार के बारे में कितनी श्रद्धा थी। ता०27 मई 1964 को नेहरू जी की मृत्यु के पश्चात श्री लालबहादुर शास्त्री भारत के दूसरे प्रधान मंत्री बने तो उन्होंने सब से पहले यही इच्छा प्रकट की थी कि विनोबा जैसे महान संत से मिलना चाहते हैं।



विनोबा और लालबहादुर शास्त्री

शास्त्री जी विनोबा के छावनी जामनी ग्राम में उन से मिलने गए। एक छोटी सी कुटिया में इन दोनों में दो घंटे तक देश के भविष्य के बारे में बातें होती रहीं।

"बातचीत समाप्त होने पर शास्त्री जी ने कहा कि—"

"मेरे सिर पर एक नई जिम्मेवारी आ गई है उसके लिए मैं विनोबा जी का आशीर्वाद लेने आया था।"

'शास्त्री जी विनोबा का आशीर्वाद लेकर चले गये थे। किन्तु समय ने उनका साथ न दिया। भारत पाक युद्ध की दुर्घटना भी विनोबा को देखनी पड़ी।

और फिर शास्त्री जी की मृत्यु का शोक समाचार भी उन्हें सुनने को मिला।

शास्त्री जी की मृत्यु को उन्होंने देश के लिए बहुत ही हानि पूर्ण बताया।

किन्तु समय की गति को विनोबा नहीं रोक सकते थे।

उन्होंने अपना कार्य उसी तरह जारी रखा। भले ही उनकी आयु बहुत हो गई थी किन्तु उन्होंने कभी भी परिश्रम में कमी नहीं आने दी।

"वही पद यात्रा था।"

"वही जनता सेवा।"

"वही देश भक्ति।"

विनोबा के मन में एक इच्छा थी कि इस देश के गरीबों को अपने पर खड़ा करके उन्हें दो समय की रोटी की चिंता से मुक्त किया जाए। जब तक हमारे देश में एक भी आदमी भूखा है। उस समय तक मैं शांति से नहीं बैठ सकता।

उन्होंने अपने इस महान कार्य को पूरा करने के लिए पवनार से फिर पद यात्रा आरंभ कर दी—

आज जब मैं इस महापुरुष की जीवन गाथा लिख रहा हूँ। तो मुझे ऐसा महसूस हो रहा है जैसे विनोबा के अंदर एक महान शक्ति काम कर रही थी।

उन्होंने अपने इस तप और त्याग से सारे विश्व को एक नया मार्ग दिखाकर भारत वर्ष का नाम हिमालय से भी ऊँचा कर दिया और साथ ही यह भी बात दिया कि त्याग मार्ग से आदमी मानवता की भलाई करके अमर हो जाता है।

अपने बचपन से लेकर जवानी तक और फिर जवानी से बुढ़ापे तक।"

देश वासियों की सेवा करते रहो उन्होंने इस सेवा का एक नया रास्ता संसार के सामने रखा।

सन् 1983 में यह बीसवीं सदी का महान् संत धैर्य छोड़कर अवश्य चला गया—

"किन्तु।"

आप यह कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि विनोबा जी आज भी हमारे बीच में ही हैं।

"वे तो अमर हैं।"

देश की भावी पीढ़ियाँ जैसे-जैसे उनकी जीवनी और उनकी दी हुई शिक्षा को गृहण करेंगी वैसे-वैसे ही विनोबा जी का जीवन लम्बा होता जाएगा।

आज जैसे ही हम अपने देश की ओर देखते हैं तो हमें देश पर छाए विनाश के बादलो में विनोबा जी की याद आती है। गाँधी जी के पश्चात् यदि हमने कोई तपस्वी संत पैदा किया है तो वे केवल "विनोबा जी हैं।"

हमारे देश का यह दुर्भाग्य है कि आज यह दोनों महान संत हमारे बीच में नहीं हैं। किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उनकी शिक्षा सदा हमारे साथ है उनके जीवन से हम बहुत कुछ सीखे हैं और सीखते रहेंगे।

विनोबा जी ने कहा था कि—

"भारत के सामने दो बड़े संकट हैं।"

"एक आर्थिक विषमता।"

"दूसरा सामाजिक विषमता।"

जब तक हम इन दोनों संकटों का शांति पूर्ण हल नहीं ढूंढ़ लेते तब तक स्थायी शांति नहीं हो सकती।

सामाजिक विषमता दूर करने के लिए जात-पाँत धर्म भाषा के झगड़े मिटाने होंगे। इससे हमारा आपसी प्रेम देगा।

आर्थिक विषमता के लिए हमें समाज के उन कमजोर वर्गों तक पहुँचना होगा। जिन्हें आजादी का कोई लाभ नहीं हुआ। जब तक हमारे देश में एक भी गरीब बाकी है तो हमारी आजादी अधूरी है। उन्होंने अपने जीवन में यही किया और यही कहा कि "हमें गरीब और हीन लोगों की ओर पहले ध्यान देना चाहिए।"

मुख्य शक्ति गरीबों के ही हाथों में हो।

इस महान कार्य के लिए उन्होंने अपना जीवन तो समाप्त कर दिया। मगर आज मैं देख रहा हूं कि उनके बहुत से काम अधूरे पड़े हैं।

सारे देश में अमीरी-गरीबी की दीवारें ऊँची होती जा रही है उनके अधूरे कामों को पूरा करने की जिम्मेवारी केवल सर्व सेवा संघ सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं पर ही आती है।

अब सोचना यह है कि क्या वे लोग अपनी इस जिम्मेवारी को पूरा करेंगे।

देश कभी विनोबा के त्याग और सेवा को भूल नहीं सकेगा। मगर फिर भी हमें अब उनके सिद्धांतों के प्रचार के लिए बहुत कुछ करना होगा। मैंने तो यह छोटा का कार्य (उनकी जीवनी) लिखकर इस काम को आरंभ ही किया है। अब यह सरकार पर जिम्मेवारी आती है कि इस महापुरुष की आदर्श जीवनी को घर-घर पहुँचाने के लिए शिक्षा संस्थानों तक अवश्य ही—पहुँचाने का प्रबंध करें।

बस अब मैं आप से विदा लेता हूँ।

□□

दृष्टि

वह अमूल्य उपहार है

जो आप ही दे सकते हैं

नेत्रदान कीजिए

जाति-पाति तोड़ दो ।

तिलक दहेज छोड़ दो ।।

छुआ-छूत को दूर भगाओ ।

कौमी एकता को अपनाओ ।।

अस्पृश्यता (छुआ-छूत) ईश्वर तथा मानवता के प्रति अपराध है। इस अभिशाप के लिए भारत में कोई स्थान हो ही नहीं सकता। इसको जड़ से मिटाएं।